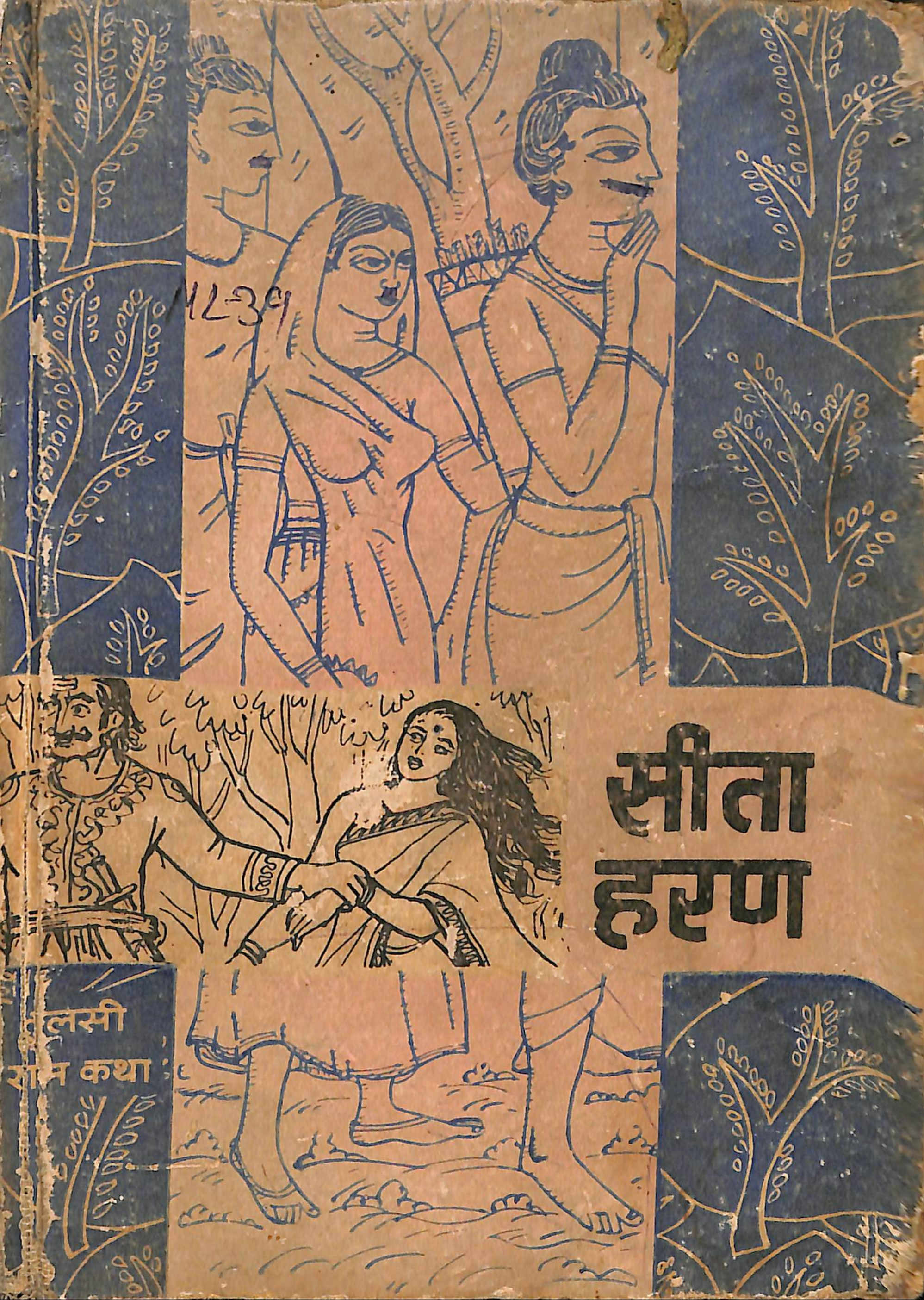

सीता हरण

ML-39

tulsi

तुलसी-राम-कथा : भाग ३

सीता-हरण

विश्वम्भरसहाय 'प्रेमी'

तुलसीकृत रामचरितमानस के आधार पर भगवान राम की सरस, रोचक एवं प्रेरक कथा

सस्ता साहित्य मण्डल

१९७८

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

प्रथम बार : १६७५

प्रकाशक
यशपाल जैन
मंत्री, सस्ता साहित्य मण्डल,
नई दिल्ली

दूसरी बार : १६७८

मूल्य
15/- रुपये

मुद्रक

मुद्रक : अग्रवाल प्रिन्टर्स देहली.

AJAY

प्रकाशकीय

हमारे देश में शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा, जिसने राम का नाम न सुना हो और राम-कथा से परिचित न हो। अपने देश में ही क्यों, संसार के अनेक देशों में राम-भक्ति की धारा प्रवाहित है। दक्षिण-पूर्व एशिया में तो समूचा लोक-जीवन राम की भक्ति से ओतप्रोत है। सच बात यह है कि राम के नाम में और उनके चरित में कुछ ऐसा जादू है कि उनकी कथा को एक बार पढ़ लेने से तृप्ति नहीं होती, उसे बार-बार पढ़ने को जी चाहता है।

इस पुस्तक-माला के चार भागों में हमने राम के जीवन के प्रमुख प्रसंगों को लेकर सारी कथा इस प्रकार दी है कि सामान्य पढ़े-लिखे पाठक भी इसे आसानी से समझ सकते हैं और इसके रस में डुबकी लगा सकते हैं। बीच-बीच में चुनी हुई चौपाइयाँ तथा दोहे भी दे दिये हैं, जिससे ये पुस्तकें और भी सरस तथा रोचक बन गई है।

प्रस्तुत पुस्तक का आरम्भ सीता-हरण के लिए रावण और मारीच के प्रपंच से होता है। सीता-हरण, जटायु की वीरगति, शबरी की भक्ति, राम-हनुमान-मिलन, सुग्रीव से भेंट, बालि-बध, सीता की खोज, विभीषण से भेंट, अशोक वाटिका में युद्ध, लंका-दहन, और लंका की विजय के लिए वानर-सेना सहित राम के प्रस्थान आदि घटनाओं का अत्यन्त मनोहारी विवरण इसमें दिया गया है। प्रसंगोचित चौपाइयों, दोहों तथा चित्रों से पुस्तक की उपादेयता और भी बढ़ गई है।

पाठकों से हमारा अनुरोध है कि वे इस तथा इस माला की अन्य सभी पुस्तकों को चाव से पढ़ें और दूसरों को पढ़ने की प्रेरणा दें।

— मंत्री

जबतक हमारी भारत भूमि में गंगा और कावेरी प्रवहमान हैं तबतक सीता-राम की कथा भी आबाल, स्त्री-पुरुष, सबमें प्रचलित रहेगी; माता की तरह हमारी जनता की रक्षा करती रहेगी।

—चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

अनुक्रम

००००

मारीच और रावण का प्रपंच	:	६
कंचन मृग के पीछे	:	१२
सीता-हरण	:	१५
जटायु की वीरगति	:	१६
सीता के वियोग में	:	२२
शबरी की भक्ति	:	२४
नारदजी को उपदेश	:	३०
राम-हनुमान मिलन	:	३५
सुग्रीव से भेंट	:	३६
बालि-वध	:	४८
वर्षा-वर्णन	:	५६
शरद-वर्णन	:	६२
सुग्रीव पर कोप	:	६४
सीता की खोज में	:	६६
हनुमान का साहस	:	७३
भक्त विभीषण से भेंट	:	७६
रावण की धमकी	:	८२

सीता को ढ़ाढ़स	:	८५
अशोक वाटिका में युद्ध	:	८६
रावणकी सभा में	:	९२
लंका दहन	;	१००
हनुमान की वापसी	:	१०५
सीता की दशा का वर्णन	:	११०
लंका की ओर	:	११५

सीता-हरण

AJAY 1340
TULI 22-B

सीता-हरण

Amit Tuli

: १ :

मारीच और रावण का प्रपंच

रावण को रात भर नींद नहीं आई। सोचता रहा—खर-दूषण मेरे समान बलशाली थे। भगवान के अतिरिक्त कोई भी देवता, मनुष्य, असुर और नागादि उन्हें नहीं मार सकता। क्या भगवान ने अवतार लिया है, या वे कोई राजकुमार हैं? यदि वे भगवान हैं तो उनके हाथों मरना अच्छा है। मनुष्य हैं, तो मैं उनकी स्त्री को चुरा लाऊंगा। यह सोचकर वह रथ पर सवार होकर मारीच के पास चल दिया। मारीच समुद्र के किनारे रहता था। रावण वहीं पहुंचा।

इधर रामचंद्रजी ने भी राक्षसों से बचे रहने का विचार किया। उन्होंने पंचवटी में रहना सुरक्षित नहीं समझा। एक दिन जब लक्ष्मणजी वन में से कंद, मूल और फल लेने गये तो उन्होंने हँसकर सीताजी से कहा :

सुनहु प्रिया व्रत रुचिर सुसीला।
मैं कछु करबि ललित नर-लीला॥
तुम्ह पावक महुं करहु निवासा।
जौं लगि करौं निसाचर नासा॥

राम कहने लगे, "हे प्रिये, हे नारी-धर्मका पालन करनेवाली सुशीले, सुनो, अब मैं कुछ मनुष्य-लीला करूंगा। इसलिए जबतक मैं राक्षसों का नाश करूं तबतक तुम अग्नि में निवास करो।"

जबहि राम सब कहा बखानी।
प्रभुपद धरि हियं अनल समानी।।
निज प्रतिबिंब राखि तहं सीता।
तैसइ सील रूप सुबिनीता।।

जब रामचंद्रजी ने ये सब बातें कहीं, तो सीताजी प्रभु राम के चरणों को हृदय में धरकर आग में समा गईं। इससे पूर्व उन्होंने अपनी छाया-मूर्ति वहांपर छोड़ दी, जो उनकी तरह ही अच्छे स्वभाववाली, रूपवती और विनम्र थी। लक्ष्मणजी को इस बात का कोई भेद मालूम नहीं हुआ। वह रोज की तरह फल-फूल लेकर कुटी पर वापस आ गए।

उधर रावण ने मारीच को सिर झुकाकर नमस्कार किया। मारीच ने भी उसका आदर-सत्कार किया और आने का कारण पूछा। उसे परेशान देखकर पूछा कि क्या बात है और अकेले ही क्यों आये हो?

दसमुख सकल कथा तेहि आगें।
कही सहित अभिमान अभागें।।
होहु कपटमृग तुम्ह छलकारी।
जेहि विधि हरि आनौं नृपनारी।।

रावण ने बड़े अभिमान से मारीच को सारी कहानी कह सुनाई। उसके बाद बोला, "तुम छल करनेवाले बनावटी मृग

बनो, जिससे मैं राम की स्त्री को उड़ा लाऊं।"

तेहि पुनि कहा सुनहु दससीसा।
ते नररूप चराचर ईसा।।
तासों तात बयरु नहिं कीजै।
मारैं मरिअ जिआएं जीजै।।

मारीच ने उत्तर दिया, "हे रावण, सुनो। वे मनुष्य नहीं हैं, बल्कि मनुष्य के रूप में संसार-भर के स्वामी हैं। हे भाई, उनसे बैर मत करो, क्योंकि उनके मारने से मौत और जिलाने से जीवन होता है।"

फिर उसने बताया, "एक बार मैं विश्वामित्र के आश्रम की तरफ गया था। श्रीराम उस समय मुनि विश्वामित्र के यज्ञ की देख-भाल कर रहे थे। उस समय उन्होंने बिना फलके का एक बाण मेरे मारा था। उसकी मार खाकर मैं सौ योजन पर आकर गिरा था। यही नहीं, उन्होंने ताड़का और सुबाहु को मार डाला था और शिवजी के धनुष को भी तोड़ दिया था। अब उन्होंने खर, दूषण और त्रिशिरा को मार डाला है। हे तात, इतना बल रखनेवाले क्या कभी मनुष्य हो सकते हैं ?

जाहु भवन कुल कुसल बिचारी।
सुनत जरा दीन्हिसि बहु गारी।।
गुरु जिमि मूढ़ करसि मम बोधा।
कहु जग मोहि समान को जोधा।।

"हे रावण, अपने कुल की भलाई का विचार करके अपने घर चले जाओ।"

रावण यह बात सुनकर जल उठा। उसने मारीच को बहुत-

सी गालियां दीं और कहा, "हे मूर्ख, तू मुझे गुरु की तरह ज्ञान सिखाता है। बता तो मेरे-जैसा संसार में दूसरा कौन योद्धा है?"

रावण की बात सुनकर मारीच ने सोचा कि शस्त्रधारी, मर्मी, समर्थ स्वामी, मूर्ख, धनी, वैद्य, भाट, कवि, रसोइया, इन नौ व्यक्तियों से वैर करने में कल्याण नहीं है। दोनों ओर मरना है। ऐसी हालत में राम के हाथों से ही मरना अच्छा है। राम का स्मरण कर उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। उसने कपट-मृग बनना स्वीकार कर लिया और रावण के साथ चल दिया। मारीच तरह-तरह के भेस बनाने में बड़ा चतुर था।

: २ :

कंचन-मृग के पीछे

जब रावण और मारीच पंचवटी के पास वन में पहुंच गये तो मारीच ने सुंदर मृग का रूप बना लिया।

अति बिचित्र कछु बरनि न जाई।
कनक देह मनिरचित बनाई॥

वह ऐसा अनोखा मृग बन गया, जिसका वर्णन नहीं हो सकता। उसने मणियों से जड़कर अपना शरीर सोने का बना लिया।

सीता परम रुचिर मृग देखा।
अंग अंग सुमनोहर बेषा॥
सुनहु देव रघुबीर कृपाला।
एहि मृग कर अति सुन्दर छाला॥

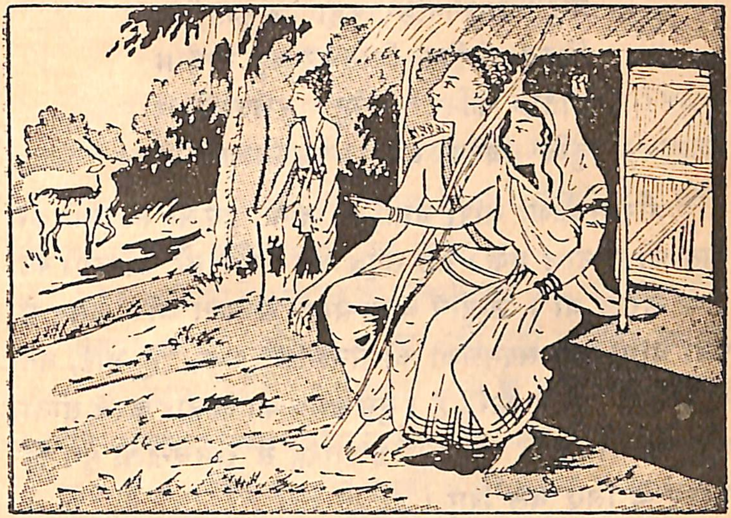

कंचन-मृग ने सीताजी को मोह लिया

सत्यसंध प्रभु बधि कर एही।
आनहु चर्म कहति वैदेही॥

सीताजी ने एक बड़ा सुंदर मृग देखा। उसके हरेक अंग की शोभा बड़ी मन हरनेवाली थी। सीताजी रामचन्द्रजी से कहने लगीं, "हे देव, हे कृपालु, सुनिए, इस मृग की खाल बहुत सुंदर है। हे सत्य के पालन करनेवाले प्रभो, इसको मारकर इसकी खाल ला दीजिए।

तब रघुपति जानत सब कारन।
उठे हरषि सुरकाजु संवारन॥
मृग बिलोकि कटि परिकर बांधा।
करतल चाप रुचिर सर सांधा॥

प्रभु लक्ष्मनहि कहा समुझाई।
फिरत विपिन निसिचर बहु भाई ।।
सीता केरि करेहु रखवारी।
बुधि बिबेक बल समय बिचारी ।।

श्रीरामचंद्रजी सारी बातों को जानते हुए भी सीताजी की बात को न टाल सके। वह सहर्ष उठे। उन्हें तो देवताओं का काम करना था। उन्होंने धनुष-बाण संभाला और कमर में फेंटा बांधा तथा लक्ष्मणजी को समझाकर कहा, "हे भाई, वन में बहुत-से राक्षस फिरते हैं। तुम समय का विचार करके सीता की रखवाली करते रहना।" इस तरह से रामचन्द्रजी मृग को मारने के लिए चल दिए।

प्रभुहिं बिलोकि चला मृग भाजी।
धाए रामु सरासन साजी ।।
कबहुं निकट पुनि दूरि पराई।
कबहुंक प्रगटई कबहुं छिपाई ।।
प्रगटत दुरत करत छल भूरी।
एहि बिधि प्रभुहि गयउ लै दूरी ।।

श्रीरामचन्द्रजी को देखकर मृग भागने लगा। वह भी अपना धनुष चढ़ाकर उसके पीछे दौड़े। कभी वह पास हो जाता था, कभी दूर भाग जाता था। इस तरह छल करके वह श्रीरामचंद्रजी को दूर ले गया।

तब तकि राम कठिन सर मारा।
धरनि परेउ करि घोर पुकारा ।।

लछिमन करि प्रथमहिं लै नामा।
पाछे सुमिरेसि मनमहुं रामा।।

तब रामचंद्रजी ने ताक कर एक कठोर बाण मारा। उसके लगते ही मारीच जमीन पर गिर पड़ा और उसने जोर की आवाज की। पहले उसने लक्ष्मण का नाम लिया। उसके बाद मन-ही-मन राम के नाम का सुमिरन किया।

श्रीरामचंद्रजी ने मारीच को पहचानकर उसे वह गति दी, जो मुनियों को भी दुर्लभ है। फिर उसे वहीं छोड़कर अपनी कुटी की तरफ लौटे। इस प्रकार राम के हाथों से मरकर मारीच मुक्ति पा गया, क्योंकि मारीच राम-भक्त था, वह रावण के हाथ से न मरकर राम के हाथों से ही मरना चाहता था, जिससे उसका उद्धार हो जाय। इधर—

आरत गिरा सुनी जब सीता।
कह लछिमन सन परम सभीता।।
जाहु बेगि संकट अति भ्राता।
लछिमन बिहसि कहा सुनु माता।।
भृकुटी बिलास सृष्टि लय होई।
सपनेहुं संकट परइ कि सोई।।

: ३ :

सीता-हरण

जब सीताजी ने दुखभरी आवाज सुनी तो वह डरकर लक्ष्मणजी से कहने लगीं, "तुम जल्दी से जाओ। तुम्हारे भाई पर संकट आया है।"

लक्ष्मणजी ने हँसकर उत्तर दिया, "हे माता, सुनो, जिनके जरा से इशारे पर सारी दुनिया में प्रलय हो जाता है, क्या वे ही श्रीराम संकट में पड़ सकते हैं ?

मरम बचन सीता जब बोला ।
हरि प्रेरित लछिमन मन डोला ।।
बन दिसि देव सौंपि सब काहू ।
चले जहां रावन ससि राहू ।।

लक्ष्मणजी के ऐसा कहने पर सीताजी ने जो बातें कहीं, वे मन को चुभनेवाली थीं । उन्हें सुनकर लक्ष्मणजी का मन ऐसे डोल गया मानो भगवान ने ही उनसे कुछ कहा हो । वह सीताजी को वन और दिशाओं के देवताओं को सौंपकर वहां चल दिये, जहां रावणरूपी चन्द्रमा को डसने के लिए राहु-रूपी श्रीराम थे ।

सून बीच दसकंधर देखा ।
आवा निकट जती कें बेषा ।।
करि अनेक विधि छल चतुराई ।
मांगेउ भीख दसानन जाई ।।

रावण मौका देखकर साधु के वेष में वहां आया, जहां कुटी में सीताजी थीं । तरह-तरह का छल और चतुराई करके रावण सीताजी से भीख मांगने लगा ।

अतिथि जान सिय कंद मूल फल ।
देन लगी तेहि कीन्हि बहुरि छल ।।
कह रावन सुन सुन्दरि बानी ।
बांधी भीख न लेउं सयानी ।।

सीताजी ने उसे अतिथि समझा। वह कंद-मूल और फलों की भीख देने लगीं। इसपर रावण कहने लगा, "हे सुंदरी, सुन ! मैं बंधी हुई भिक्षा नहीं लेता।" जाते समय लक्ष्मणजी कुटिया के बाहर एक रेखा खींच गये थे और सीताजी से कह गये थे कि आप किसी भी कारण से इससे बाहर न जायं। लेकिन—

विधि गति बाम काल कठिनाई।
रेखा लांघि सिय बाहर आई॥

विधाता की चाल उल्टी है। काल की गति भी बड़ी कठिन है। सीताजी लकीर को लांघकर बाहर आ गईं।[1]

इसके बाद रावण तरह-तरह की सुन्दर कथाएं कहने लगा। उसने कभी राजनीति की बातें कीं, कभी डर दिखाया तो कभी प्रेम भी प्रकट किया। सीताजी उसकी बातों को सुनकर बोलीं, "हे साधु, तुम तो दुष्ट मनुष्य की-सी बातें करते हो।"

यह सुनना था कि रावण ने अपना साधु-वेष हटा दिया। उसने जब अपना नाम बताया तो सीताजी डर गईं, लेकिन उन्होंने हिम्मत नहीं छोड़ी।

कह सीता धरि धीरजु गाढ़ा।
आई गयउ प्रभु रहु खल ठाढ़ा॥

धीरज रखकर उन्होंने कहा, "अरे दुष्ट, खड़ा तो रह, मेरे प्रभु आ गये। अरे दुष्ट, जैसे खरगोश सिंह की स्त्री की इच्छा करके मारा जाता है, वैसे ही तेरा काल निकट आ पहुंचा है।"

सुनत बचन दससीस रिसाना।
मन महुं चरन बंदि सुख माना॥

---

१. यह प्रसंग क्षेपक माना जाता है।

क्रोधवंत तब रावन लीन्हिसि रथ बैठाइ ।
चला गगनपथ आतुर भयं रथ हांकि न जाइ ॥

यह बात सुन रावण झुंझला गया; लेकिन उसने मन-ही-मन सीताजी के चरणों की वंदना की और इस भक्ति-भाव में उसने अपना सुख और कल्याण समझा।

फिर क्रोध में भरकर सीताजी को रथ में बैठा लिया और बड़ी उतावली के साथ आसमान के रास्ते चला। डर के मारे उससे रथ नहीं चलाया जा रहा था।

हा जग एक बीर रघुराया ।
केहि अपराध बिसारेहु दाया ॥
आरति हरन सरन सुखदायक ।
हा रघुकुल सरोज दिननायक ॥

सीताजी विलाप करती हुई कहने लगीं, "हा, संसार के एक मात्र वीर श्रीरामचन्द्रजी, आपने किस अपराध के कारण मुझे भुला दिया! हे दुखों के हरने वाले, हे शरण में आये को सुख देनेवाले, हा, रघुकुल के कमल के सूरज!"

हा लक्षिमन तुम्हार नहिं दोसा ।
सो फलु पावउं कीन्हेउं रोसा ॥
बिबिध बिलाप करति बैदेही ।
भूरि कृपा प्रभु दूरि सनेही ॥
बिपति मोरि को प्रभुहि सुनावा ।
पुरोडास चह रासभ खावा ॥

सीताजी विलाप करती हुई कहने लगीं, "हां लक्ष्मण, तुम्हारा कोई कसूर नहीं है। मैंने जो क्रोध किया, उसका फल

मुझे मिला।" इस तरह सीताजी तरह-तरह से विलाप करने लगीं। उन्होंने कहा, "प्रभु की दया तो बहुत है, लेकिन वे स्नेही प्रभु मुझसे बहुत दूर हैं। प्रभु को मेरी मुसीबत कौन सुनावे। यज्ञ के अन्न को गधा खाना चाहता है।"

: ४ :

जटायु की वीरगति

सीताजी को इस तरह विलाप करते सुनकर सभी जीव दुखी हो गये। जिस समय सीताजी आकाश-मार्ग से विलाप करती हुई जा रही थीं, गीधराज जटायु ने उनकी दुख-भरी वाणी सुनी। वह तुरंत पहचान गया कि यह तो रामचन्द्रजी की पत्नी सीताजी विलाप कर रही हैं।

अधम निसाचर लीन्हें जाई।
जिमि मलेच्छ बस कपिला गाई॥

फिर उसने देखा कि नीच राक्षस उन्हें लिये जा रहा है। वह उसके हाथ में ऐसे पड़ गई हैं जैसे कसाई के हाथ में कपिला गाय। वह पुकार उठा—

सीते पुत्रि करसि जनि त्रासा।
करिहउं जातुधान कर नासा॥
धावा क्रोधवन्त खग कैसे।
छूटइ पबि परबत कहुं जैसे॥

"हे सीते, हे पुत्री, तू भय मत कर। मैं इस राक्षस को नष्ट कर दूंगा।" यह कहकर वह क्रोध में भरकर ऐसे दौड़ा जैसे वज्र पर्वत की ओर दौड़ता है। उसने रावण से भयंकर लड़ाई की। एक बार

तो उसने सीताजी को रथ से उतार लिया। उन्हें एक ओर बैठाकर उसने रावण पर चोंचों से प्रहार किया। उसका शरीर विदीर्ण हो गया, जिससे एक पल के लिए वह मूर्छित हो गया। लेकिन अंत में रावण के सामने जटायु का कुछ बस न चल सका।

जटायु-रावण-युद्ध

रावण ने तलवार निकालकर जटायु के पंख काट दिये। वह भूमि पर गिर पड़ा और श्रीराम को याद करने लगा।

सीतहि जान चढ़ाइ बहोरी।
चला उताइल त्रास न थोरी॥
करति बिलाप जगति नभ सीता।
व्याध बिबस जनु मृगी सभीता॥

उधर रावण ने सीताजी को फिर रथ पर चढ़ा लिया और बड़ी तेजी से चल पड़ा। उसे डर लग रहा था। सीताजी भय-भीत हिरनी के समान विलाप करती हुई जा रही थीं। जाते-जाते उन्होंने—

गिरि पर बैठे कपिन्ह निहारी।
कहि हरिनाम दीन्ह पट डारी॥

एक पहाड़ी पर बैठे हुए कुछ वानरों को देखा और रामनाम लेकर अपना एक कपड़ा गिरा दिया।

एहि बिधि सीतहि सो लै गयऊ।
बन असोक महं राखत भयऊ॥

इस तरह से रावण सीताजी को अपने यहां ले आया। उसने उनको अशोकवन में जाकर रखा। उसने सीताजी को तरह-तरह का डर दिखाया, लेकिन वह घबराई नहीं। उसकी धमकियों से जरा भी विचलित न हुईं। जिस समय कपट-मृग के पीछे श्रीरामजी गये थे, उस समय की उनकी छवि को हृदय में रखकर वह उनका स्मरण करने लगीं।

: ५ :

सीता के वियोग में

उधर श्रीरामचंद्रजी ने जब लक्ष्मण को अकेला अपने पास आते देखा तो उनको बड़ी चिंता हुई। उन्होंने कहा, "हे भाई, तुम सीताजी को अकेला छोड़कर मेरे पास क्यों चले आये ?"

निसिचर निकर फिरहिं बन माहीं।
मम मन सीता आश्रम नाहीं ॥
गहि पद कमल अनुज कर जोरी।
कहेउ नाथ कछु मोहि न खोरी ॥

"वन में राक्षसों के झुंड-के-झुंड फिरते हैं। मुझे आशंका होती है कि सीताजी अब कुटी में नहीं हैं।"

लक्ष्मणजी ने श्रीराम के कमल-रूपी पैरों को पकड़कर और दोनों हाथों को जोड़कर कहा, "हे नाथ, इसमें मेरा अपराध नहीं है।"

और उन्होंने सारी कथा श्रीराम को कह सुनाई। उसे सुनते हुए श्रीराम अपने भाई लक्ष्मण के साथ कुटी पर आये। सीताजी कुटी में नहीं थी। राम यह देखकर बहुत ही व्याकुल हो उठे। सीताजी की याद करके वह विलाप करने लगे। लक्ष्मणजी ने उनको तरह-तरह से समझाया, पर उनका हृदय तो सीताजी की याद में तड़प रहा था। विलाप करते हुए उन्हें ढूंढ़ने के लिए वह कुटी छोड़कर आगे चल दिये और पेड़ तथा जीव-जंतुओं तक से सीताजी के बारे में पूछने लगे—

हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी।
तुम्ह देखी सीता मृगनैनी ॥

"हे पक्षियो, हे पशुओ, हे भौरो, क्या तुमने मृगनयनी सीता को देखा है ?"

इस प्रकार उन्होंने सभीसे पूछा। उन्होंने सीताजी को पुकार-पुकारकर अपने मन का दुख प्रकट किया। जब वह इस तरह विलाप करते जा रहे थे तो उन्होंने एक जगह जटायु को पड़े देखा। वह उनकी याद कर रहा था। उन्होंने पास जाकर बड़े प्रेम से उसके सिर पर हाथ फेरा। उसकी पीड़ा कुछ कम हुई। तब उसने उन्हें सारी बातें बताईं। उसने कहा, "रावण मेरा यह हाल कर गया है। वही दुष्ट सीताजी को हरकर ले गया है। वह दक्षिण को तरफ गया है। सीताजी बड़ा विलाप करती जा रही थीं। मैं तो आपके दर्शनों के लिए जिंदा रह गया हूं, नहीं तो न जाने मेरे प्राण कब के निकल गये होते।"

राम कहा तनु राखहु ताता।
मुख मुसुकाई कहीं तेहिं बाता॥
जाकर नाम मरत मुख आवा।
अडमउ मुकुत होइ श्रुति गावा॥
सो मम लोचन गोचर आगें।
राखौं देह नाथ केहि खाँगें॥

श्रीराम ने जटायु से पूछा, "हे प्यारे, क्या तुम अपना जीवन और अपने इस शरीर को बनाये रखना चाहते हो ?"

राम की इस बात को सुनकर जटायु ने मुस्कराकर कहा, "जिनका नाम मरते समय मुख में आने से पापी भी तर जाता है, ऐसा वेद कहते हैं, वे श्रीराम मेरी आंखों के सामने खड़े हैं। मैं फिर अपना शरीर किसलिए रखूं ? हे राम, अब मैं जीना

नहीं चाहता ।"

जटायु की बात सुनकर श्रीराम की आंखों में पानी भर आया। जटायु की भक्ति और उसके प्रेम से प्रसन्न होकर राम ने उसे वरदान दिया, "जटायु, तुम्हें परम गति मिले।" फिर बोले, "लेकिन तुम स्वर्ग में पहुंचकर मेरे पिताजी से सीताजी के हरे जाने की बात मत कहना; क्योंकि वह इस बात को सुनकर दुखी होंगे। मरने पर रावण उनको अपने-आप बता देगा ।"

इसके पश्चात जटायु की मृत्यु हो गई । राम की भक्ति के कारण वह स्वर्ग जाने का अधिकारी बना । श्रीराम ने स्वयं उसके शरीर का विधिपूर्वक दाह-संस्कार किया ।

: ६ :

शबरी की भक्ति

दोनों भाई आगे चल दिये। वे वन की सघनता देखते जाते थे, इसी रास्ते पर उन्होंने कबंध राक्षस का मारा । फिर कुछ दूर चलने पर वे शबरी के आश्रम में पहुंचे। शबरी उस घने वन में अकेली रहती थी। वह बड़ी तपस्विनी थी । उसका अपना एक छोटा-सा आश्रम था । अपने लिए उसने एक कुटिया बना रखी थी । उसीमें वह भगवत् भजन करती रहती थी । उसके वहां रहने से आने-जानेवालों को बड़ा सुख मिलता था। वे वृक्षों की छांह में बैठकर विश्राम करते थे और ठंडा जल पीकर शबरी को धन्यवाद देते हुए चले जाते थे ।

शबरी को बताया गया था कि वह श्रीराम के दर्शन कर लेगी तो उसका जीवन सफल हो जायगा । इसलिए वह उनके

उधर आने की बाट देखती रहती थी। अंत में उसकी मनोकामना पूरी हुई। राम उधर ही आ गये। जिस समय राम उसकी कुटिया के समीप आये, शबरी ने दौड़कर उनके चरण छुये। प्रेम से विह्वल होकर वह दोनों भाइयों के चरणों से लिपट गई। न जाने कब से वह श्रीराम के दर्शनों की आश लगाये हुए थी !

प्रेम मगन मुख बचन न आबा।
पुनि पुनि पद सरोज सिर नाबा।।
सादर जल लै चरन पखारे।
पुनि सुन्दर आसन बैठारे।।

शबरी ने बड़े रसीले कंद, मूल और फल लाकर दिये।

शबरी प्रेम में इतनी मगन हो गई कि उसके मुख से बोल

ही नहीं निकला। उसने बार-बार राम के चरण-कमलों में सिर झुकाया। उसने पानी लाकर दोनों भाइयों के पैर पखारे। फिर उन्हें सुन्दर आसनों पर बैठाया।

कंद मूल फल सुरस अति दिये राम कहुं आनि।
प्रेम सहित प्रभु खाये बारंबार बखानि॥

शबरी ने बड़े रसीले कंद, मूल और फल लाकर उनको दिये। दोनों ने प्रेम के साथ उनको खाया और उनकी बार-बार बड़ाई की। श्रद्धा और भक्ति से दिये गए मीठे-मीठे फलों को खाकर दोनों भाई बड़े प्रसन्न हुए।

पानि जोरि आगे भइ ठाढ़ी।
प्रभुहि बिलोकि प्रीति अति बाढ़ी॥
केहि बिधि अस्तुति करौं तुम्हारी।
अधम जाति मैं जड़ मति भारी॥
अधम ते अधम अधम अति नारी।
तिन्ह महं मैं मति मंद अघारी॥

उसके बाद वह हाथ जोड़कर खड़ी हो गई। शबरी राम के प्रेम में मगन थी। कहने लगी, "मैं किस प्रकार आपकी स्तुति करूं। हे पापनाशक भगवान, जो नीच से नीच हैं, उनमें स्त्री सबसे अधिक नीच समझी जाती है। मैं तो उन स्त्रियों में भी अत्यंत मंद बुद्धिवाली स्त्री हूं।"

कह रघुपति सुनु भामिनि बाता।
मानउं एक भगति कर नाता॥
जाति पांति कुल धर्म बड़ाई।
धन बल परिजन गुन चतुराई॥

भगतिहीन नर सोहइ कैसा ।
बिनु जल वारिद देखिअ जैसा ।।

श्रीराम कहने लगे, "हे शबरी, मेरी बात सुन । मैं तो केवल एक भक्ति का नाता ही मानता हूं । अगर मनुष्य की जाति ऊंची है, कुल भी बड़ा है, बड़ाई भी मिली है, रुपया-पैसा और बल भी है, गुण और चतुरता भी है; लेकिन उसमें भक्ति नहीं है, तो मनुष्य ऐसे है जैसे बिना जल का बादल ।"

राम ने उसे सब प्रकार से तसल्ली दी और समझाया कि तुम अपने को किसी भी दशा में छोटा और नीच न समझो । उन्होंने उसे नौ प्रकार की भक्ति के बारे में समझाया और अंत में कहा, "जिसमें इनमें से एक प्रकार की भी भक्ति है, वह मेरा परम प्यारा है । शबरी ! तुझमें तो सब प्रकार की भक्ति है । इसलिए तू तो मेरे लिए परम प्यारी है । तू अपने को नीच न समझ।"

शबरी को ज्ञान की बातें सुनाकर राम ने सीताजी के बारे में पूछताछ की । उनको तो सीताजी का पता लगाना था । इसी-लिए वे मार्ग में मिलनेवाले सभी व्यक्तियों से सीताजी के बारे में पूछते थे ।

जनक सुता कइ सुधि भामिनी ।
जानहि कहु करिबर गामिनी ।।

शबरी से उन्होंने पूछा, "हे शबरी, क्या तुम जानकी के बारे में कुछ जानती हो ? अगर जानती हो तो बताओ ।"

शबरी को सीताजी के बारे में कोई भी समाचार मालूम नहीं था । इसलिए उसने अपने पास में रहनेवाले सुग्रीव का पता बताया; क्योंकि शबरी जानती थी कि सुग्रीव उनकी मदद कर

सकता है और वह सीताजी का पता लगा सकता है ।

पंपासरहि जाहु रघुराई ।
तहं होइहि सुग्रीव मिताई ।।
सो सब कहिहि देव रघुबीरा ।
जानतहूं पूछहु मतिधीरा ।।

शबरी ने कहा, "हे श्रीराम, आप पंपापुर के तालाब के पास जाइये। वहां आपकी सुग्रीव से मित्रता होगी। वह आपको सीताजी का सारा हाल बतायगा। हे रघुबीर, आप सबकुछ जानते हुए भी मुझसे क्यों पूछ रहे हैं ? आप तो अंतर्यामी हैं।"

इतना कहकर वह बार-बार प्रभु के चरणों में प्रणाम करने लगी। इसके बाद दोनों भाई उस वन को छोड़कर पंपापुर की तरफ चल दिये। सीताजी की खोज के लिए श्री रामचंद्रजी का मन बड़ा व्याकुल हो रहा था। वह अपने भाई लक्ष्मण को तरह-तरह की कथाएं सुनाने लगे, जिससे उनका मन अधिक भारी न हो।

लछिमन देखु बिपिन कइ सोभा ।
देखत केहि कर मन नहिं छोभा ।।
नारि सहित सब खग मृग बृन्दा ।
मानहुं मोरि करतहहिं निन्दा ।।

"हे लक्ष्मण, जरा वन की शोभा तो देखो, इसे देखकर किसका मन न लुभा जायगा ! वन में पशु-पक्षी सभी अपने जोड़ों के साथ हैं, मानो वे सब मेरी निंदा कर रहे हों।

हमहिं देखि मृग निकर पराहीं ।
मृगीं कहहि तुम्ह कहं भय नाहीं ।।

तुम आनंद करहु मृग जाए।
कंचन मृग खोजन ए आए।।

"हे लक्ष्मण, जब मृगों का झुंड हमें देखकर भागने लगता है तब मृगी कहती है—तुमको डरना नहीं चाहिए। तुम तो साधारण मृग हो। राम तो सोने का मृग ढूंढ़ते फिरते हैं। तुम तो निर्भय होकर घूमो।"

इस तरह राम जीव-जंतुओं की भी चर्चा करते हुए चले। उनको पग-पग पर सीताजी की याद आ रही थी। वह बार-बार वृक्षों से सीताजी का पता पूछते थे, साथ ही लक्ष्मण से प्रकृति की निराली छटा का भी वर्णन करते जाते थे।

देखहु तात बसंत सुहावा।
प्रिया हीन मोहि भय उपजावा।।

उन्होंने कहा, "हे भाई! देखो बसंत कितना सुहावना है। लेकिन सीताजी के बिना यह मुझको डरावना-सा लगता है।"

रास्ता काटने के लिए वह कभी वृक्षों की सुंदरता का वर्णन करते थे और कभी वन के पशु-पक्षियों के घूमने-फिरने की चर्चा करते थे। वन, पर्वतों में भी सीता को खोजने का वे यत्न करते थे। जब राम चलते-चलते थक जाते तो किसी छायादार पेड़ के नीचे विश्राम करते। कुछ देर विश्राम कर लेने पर फिर आगे चल देते।

चलते-चलते श्रीराम पंपापुर के तालाब के पास पहुंच गये। स्थान बड़ा सुंदर था। यहां बहुत-सी कुटियां बनी हुई थीं, जिनमें मुनि लोग रहते थे। पेड़ों की सुंदर छाया फैली हुई थी। श्री रामचंद्रजी ने इसी स्थान पर अपने ठहरने का प्रबंध किया

और वे तालाब के समीप ठहर गये ।

देखि राम अति रुचिर तलावा ।
मज्जनु कीन्ह परम सुख पावा ।।
देखि सुंदर तरुवर छाया ।
बैठे अनुज सहित रघुराया ।।

उन्होंने पंपापुर के तालाब में स्नान किया । स्नान करने से उनको बड़ा आनंद मिला । फिर वे वृक्ष की छाया में बैठ गये और लक्ष्मण के साथ वार्तालाप करने लगे ।

तहं पुनि सकल देव मुनि आये ।
अस्तुति करि निज धाम सिधाये ।।

इस अवसर पर राम का पवित्र नाम सुनकर उस स्थान पर रहनेवाले देवता और मुनि भी वहां आ गये । उन्होंने राम के दर्शन किये, फिर वे सब उनकी स्तुति करने लगे । इसके पश्चात् वे सब अपने-अपने स्थानों को लौट गये ।

और राम भाई लक्ष्मण को अनेक प्रकार की सुंदर-सुंदर कथाएं सुनाने में समय व्यतीत करने लगे ।

: ७ :

नारदजी को उपदेश

उसी वन में उन दिनों नारदजी भी घूम रहे थे । उन्होंने राम और लक्ष्मण को देख लिया । राम को व्याकुल देखकर वह बड़े दुखी हुए और उनकी ओर चल दिये ।

बिरहवंत भगवंतहि देखी ।
नारद मन भा सोच बिसेखी ।।

मोर साप करि अंगीकारा ।
सहत राम नाना दुख भारा ।।

नारद सोचने लगे कि राम उनके दिये शाप के कारण ही तरह-तरह के दुख उठा रहे हैं ।

इसलिए वह अपनी वीणा पर संगीत की तान छेड़ते हुए वहां पहुंच गए । उन्होंने श्रीराम को दंडवत की । राम ने नारद को गले लगा लिया और बड़े प्रेम से उनका स्वागत किया । लक्ष्मणजी ने उनके पैर धोये । नारदजी श्रीराम के पास बैठ गये और उनसे बातें करने लगे । उस समय नारद ने श्रीराम को बड़ा प्रसन्न हुआ समझा । इसलिए उन्होंने राम से कहा, "मैं आपसे एक वरदान मांगता हूं ।" श्रीराम ने कहा, "मुनिदेव, आपकी जो इच्छा हो सो मांगो ।" नारद ने राम के ऐसा कहने पर पिछली एक बात का समाधान चाहा । उन्होंने श्री-रामचंद्रजी से एक प्रश्न किया :

राम जबहिं प्रेरेउ निज माया ।
मोहेहु मोहि सुनहु रघुराया ।।
तब बिबाह मैं चाहउं कीन्हा ।
प्रभु केहि कारन करै न दीन्हा ।।

नारद कहने लगे, "हे रघुनाथजी, आपने जिस समय अपनी माया से मुझे मोह लिया था, उस समय मैं अपना विवाह करना चाहता था । आप बताइए कि आपने ऐसा क्यों नहीं करने दिया ?"

सुनु मुनि तोहि कहेउं सहरोसा ।
भजहिं जे मोहि तजि सकल भरोसा ।।

करउं सदा तिन्ह कै रखवारी ।
जिमि बालक राखइ महतारी ।।

श्रीरामचंद्रजी ने नारद को उत्तर देते हुए कहा, "हे मुनि, धैर्य के साथ सुनो । मैं आपको सारी बात बताता हूं । जो मनुष्य सब तरह का भरोसा छोड़कर केवल मेरा भजन करते हैं, मैं हमेशा उनकी रखवाली करता हूं । जैसे माता अपने बालक को रखती है, वैसे ही मैं उनको रखता हूं । उस समय मैंने भी आपकी रक्षा की थी । आप उस समय विवाह करना चाहते थे और मैं समझता था कि आपके लिए यह उचित नहीं था ।"

इसके बाद श्री रामचंद्रजी ने उनको बताया, "आप मुनि हैं । आपके हृदय में स्त्री के लिए इच्छा पैदा नहीं होनी चाहिए थी । आपकी आयु भी बहुत थी । उस समय मैंने आपकी भलाई के लिए यही उचित समझा था कि आप विवाह करने में सफल न हों ।"

अवगुन मूल सूलप्रद प्रमदा सब दुख खानि ।
ताते कीन्ह निवारन मुनि मैं यह जियं जानि ।।

श्रीराम ने आगे कहा, "युवती स्त्री अवगुणों की जड़, पीड़ा देनेवाली, और सब दुखों की खान होती है । इसलिए, हे मुनि, ऐसा समझकर मैंने तुमको विवाह करने से रोक दिया था ।"

यह सब कहकर राम बोले, "मुनिवर, मुझे आपसे किसी तरह का भी रागद्वेष नहीं था । साक्षात् मुनि के वेष में देखकर यह मैंने उचित समझा था कि आप स्त्रियों के संपर्क में न आवें । संसार की भलाई के लिए आप-जैसे मुनियों को गृहस्थ में पड़ने की आवश्यकता नहीं थी ।"

श्रीरामचंद्रजी के ऐसा समाधान करने पर नारद प्रसन्न हो

गए। उनके मन में जो गलत विचार बन गया था, वह दूर हो गया। उन्होंने विनती करते हुए कहा, "हे रघुवीर, हे संसार के दुखों से छुटकारा दिलानेवाले प्रभो ! आप कृपा करके मुझे संतों के लक्षण बताइये।"

सुनु मुनि संतन्ह के गुन कहउं।
जिन्ह ते मैं उन्हके बस रहउं॥

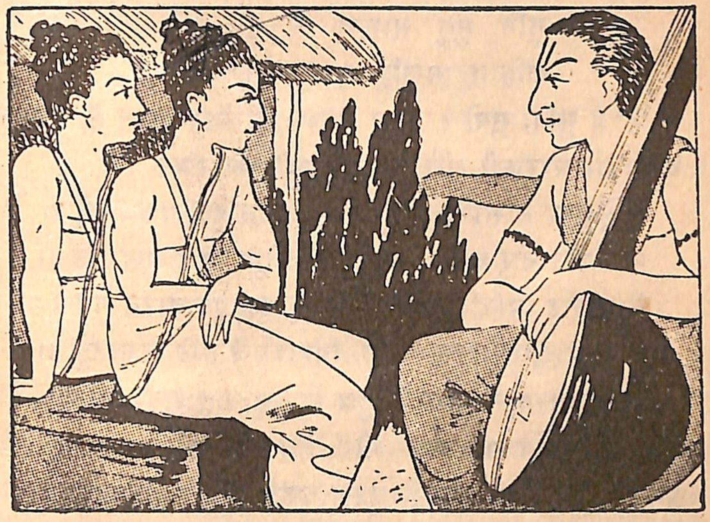

"मैं आपको संतों के गुण बताता हूं।"

श्रीरामचंद्रजी ने नारद से कहा, "हे मुनिदेव, मैं आपको संत मनुष्यों के वे गुण बताता हूं, जिनके कारण मैं उनके वश में रहता हूं।"

श्रीराम ने संत मनुष्यों के गुणों का वर्णन करते हुए बताया कि संत मनुष्य अपनी बड़ाई को सुनने में संकोच करते हैं और दूसरों के गुणों की बात सुनकर प्रसन्न होते हैं। वे सरल स्वभाव-

वाले होते हैं और सबसे प्रेम करते हैं। वे कभी अभिमान नहीं करते और कभी भूलकर भी बुरे मार्ग पर पैर नहीं रखते। संतजन काम, क्रोध, मोह, लोभ, घमंड और मत्सरता छः तरह के विकारों से अलग रहते हैं। वे बाहर और भीतर से समान होते हैं। उनकी आत्मा पवित्र होती है। वे सबका भला करते हैं। अंत में श्रीराम ने कहा :

मुनि सुनु साधुन्ह के गुन जेते।
कहि न सकहिं सारद श्रुति तेते ।।

"हे मुनि, सुनो। साधु मनुष्य के जितने गुण हैं, उनका वर्णन तो सरस्वती और वेद भी नहीं कर सकते।"

कहि सक न सारद सेष नारद सुनत पद पंकज गहे।
अस दीन बंधु कृपाल अपने भगत गुन निज मुख कहे ।।
सिरु नाइ बारहिं बार चरनन्हि ब्रह्मपुर नारद गये।
ते धन्य तुलसीदास आस बिहाइ जे हरि रंग रंये ।।

जब नारद ने राम के मुख से यह बात सुनी कि संतों के गुणों का वर्णन सरस्वती और शेष भी नहीं कर सकते तो उन्होंने राम के कमलरूपी चरण पकड़ लिये। दीन-बंधु, कृपा-निधान राम ने अपने ही मुख से भक्तों के गुणों का बखान किया था न!

इस प्रकार नारद राम के चरणों में बार-बार सिर नवाकर ब्रह्मपुर चले गए। तुलसीदासजी कहते हैं कि वे मनुष्य धन्य हैं, जो सब आशाओं को त्यागकर राम के रंग में रंग जाते हैं।

नारदजी के जाने के बाद श्रीराम ऋष्यमूक पर्वत की ओर आगे बढ़ गए। अपने साथियों सहित सुग्रीव वहीं रहता था।

: ८ :

राम-हनुमान-मिलन

पंपापुर से चलकर राम और लक्ष्मण दोनों भाई ऋष्यमूक पर्वत के पास पहुंचे। अपने मंत्रियों के साथ सुग्रीव वहीं रहता था। उसने अपार बलवाले श्रीराम और लक्ष्मण को आते हुए देखा।

अति सभीत कह सुनु हनुमाना।
पुरुष जुगल बल रूप निधाना।।
धरि बटु रूप देखु तैं जाई।
कहेसु जानि जियँ सैन बुझाई।।
पठए बालि होहिं मन मैला।
भागौं तुरत तजौं यह सैला।।

सुग्रीव भयभीत होकर कहने लगा, "हे हनुमान, सुनो। ये दोनों पुरुष बल और रूप का भंडार हैं। तुम ब्राह्मण का रूप बनाकर इनके पास जाओ और उनकी सब बातें जानकर मुझे बताओ। अगर वे किसी बुरे विचार से बालि के भेजे हुए आये हैं तो मैं तुरंत इस पहाड़ी को छोड़कर भाग जाऊंगा।"

बिप्र रूप धरि कपि तहं गयऊ।
माथ नाइ पूछत अस भयऊ।।
को तुम्ह स्यामल गौर सरीरा।
छत्री रूप फिरहु बन बीरा।।
कठिन भूमि कोमल पद गामी।
कवन हेतु बिचरहु बन स्वामी।।

सुग्रीव की बात सुनकर हनुमान ने ब्राह्मण का रूप बनाया और श्रीराम के पास गये। उन्होंने मस्तक नवाकर उनसे पूछा, "क्षत्रिय के रूप में सांवले और गोरे शरीरवाले आप दोनों कौन हैं? कठोर भूमि पर कोमल पैरों से चलनेवाले, प्रभो, आप किस लिए वन में घूम रहे हैं?"

मृदुल मनोहर सुंदर गाता।
सहत दुसह बन आतप बाता॥
की तुम्ह तीनि देव महं कोऊ।
नर नारायण की तुम्ह दोउ॥

जग कारन तारन भव, भंजन धरनी भार।
की तुम्ह अखिल भुवन-पति, लीन्ह मनुजअवतार॥

हनुमानजी ने कहा, "मन को हरनेवाले आपके सुन्दर अंग हैं। आप वन के महान दुख, धूप और हवा क्यों सह रहे हैं? क्या आप ब्रह्मा, विष्णु और महेश इन तीन देवताओं में से कोई हैं? या आप दोनों नर और नारायण हैं? क्या आप इस जगत के कारण और तीनों लोकों के स्वामी हैं, जो इस संसार के बोझ को उतारने के लिए मनुष्य के रूप में अवतार लेकर फिर रहे हैं?"

हनुमानजी की इन सब बातों को सुनकर रामचन्द्रजी ने अपने वन में आने की सारी कथा कह सुनाई।

कोसलेस दसरथ के जाए।
हम पितु बचन मानि बन आए॥
नाम राम लछिमन दोउ भाई।
संग नारि सुकुमारि सुहाई॥

इहां हरी निसिचर बैदेही।
बिप्र फिरहिं हम खोजत तेही॥
आपन चरित कहा हम गाई।
कहहु बिप्र निज कथा बुझाई॥

श्रीराम ने कहा, "हम राजा दशरथ के पुत्र हैं। पिता की आज्ञा मानकर वन में आये हैं। हमारे नाम राम और लक्ष्मण हैं और हम दोनों भाई हैं। हमारे साथ एक सुंदर सुकुमारी स्त्री थी। यहां वन में राक्षस ने उस मेरी स्त्री सीता को चुरा लिया। हे ब्राह्मण! हम उसे ही ढूंढ़ते फिर रहे हैं।" फिर उन्होंने कहा, "हमने अपनी कथा तो बता दी। हे ब्राह्मण! अब तुम अपनी कथा भी समझाकर कहो।"

हनुमानजी ने अबतक श्रीराम को पहचान लिया था। उन्होंने तुरंत उनके चरण पकड़ लिये। उनका शरीर पुंलकित हो उठा। मुख से बोल तक न निकला। वह श्रीराम के दर्शन करने में ही मग्न हो गए। फिर उन्होंने धीरज धर कर श्रीराम की स्तुति की।

हनुमानजी इस प्रकार बोले, "हे प्रभो! मेरी तो छोटी बुद्धि है, इसलिए मैंने आपको न पहचानकर आपका नाम पूछा; लेकिन आप तो सारे लोकों की बात जानते हैं, फिर आपने मनुष्य की तरह मुझसे मेरा नाम क्यों पूछा?"

अस कहि परेउ चरन अकुलाई।
निज तनु प्रकटि प्रीति उर छाई॥
तब रघुपति उठाइ उर लावा।
निज लोचन जल सींचि जुड़ावा॥

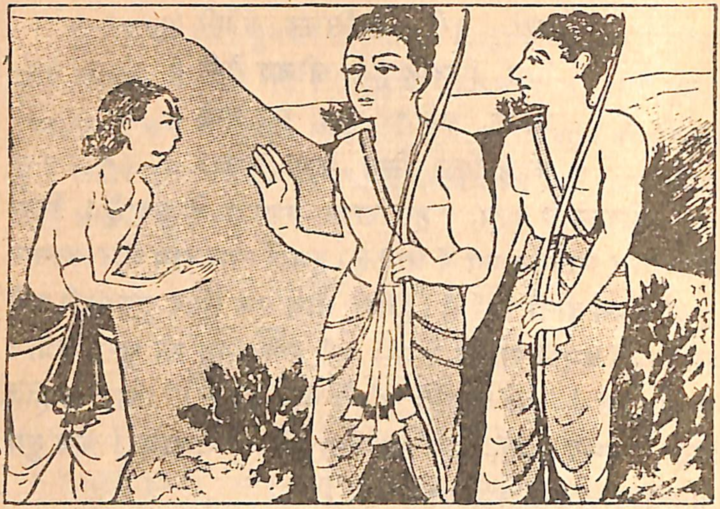

हनुमान ने रामजी की स्तुति की

इस तरह अपना प्रेम और अपनी भक्ति दिखाते हुए हनुमान रामचन्द्रजी के पैरों पर गिर पड़े। उन्होंने अपना असली रूप भी प्रकट कर दिया। श्रीराम ने उनको उठाकर अपनी छातीसे लगा लिया। उनका हृदय अपने भक्त के लिए प्रेम से भर उठा। बोले "हे कपि, सुनो ! तुम अपना मन छोटा न करना। तुम मुझे लक्ष्मण से भी दुगने प्यारे हो। मुझे लोग समदर्शी कहते हैं, पर मैं कहता हूं कि मुझे सेवक प्यारे हैं।"

सुनु कपि जियं मानसि जनि ऊना।
तैं मम प्रिय लछिमन तें दूना॥

हनुमान श्रीराम के ऐसे वचन सुनकर प्रसन्न और गद्‌गद हो गए। उन्होंने सीताजी की खोज करने के लिए अपना विचार बताते हुए कहा—

नाथ सैल पर कपि-पति रहई।
सो सुग्रीव दास तव अहई॥
तेहि सन नाथ मैयत्री कीजे।
दीन जानि तेहि अभय करीजे॥
सो सीता कर खोज कराइहि।
जहं तहं मरकट कोटि पठाइहि॥

"हे नाथ! इस पहाड़ पर वानरों का स्वामी सुग्रीव रहता है। वह आपका सेवक है। हे नाथ! आप उससे दोस्ती कीजिए। उसे दीन समझकर निर्भय कर दीजिए। वह सीताजी की तलाश करायगा और जहां-तहां करोड़ों वानरों को भेज देगा।"

एहि विधि सकल कथा समुझाई।
लिये दुओ जन पीठि चढ़ाई॥

इस तरह हनुमानजी ने सारी बात समझाकर कही। इसके बाद उन्होंने श्रीराम और लक्ष्मण दोनों भाइयों को अपनी पीठ पर चढ़ा लिया और उनको अपने राजा सुग्रीव के पास ले गये।

: ९ :

सुग्रीव से भेंट

जब सुग्रीव राम कहुं देखा।
अतिसय जन्म धन्य करि लेखा॥
सादर मिलेउ नाइ पद माथा।
भेंटउ अनुज सहित रघुनाथा॥

जब सुग्रीव ने राम को देखा, तो उसने अपने जन्म को धन्य

माना । वह उनके पैरों में अपना मस्तक नवाकर बड़े आदर के साथ मिला । श्रीराम भी अपने छोटे भाई लक्ष्मण के साथ सुग्रीव से गले मिले । सुग्रीव मन-ही-मन सोच रहा था कि क्या राम मुझ से प्रीति करेंगे । इस प्रकार मिलन हो जाने पर सब बैठ गए । हनुमानजी ने दोनों की सब बातें कहीं । दोनों पक्षों ने आग को बीच में डालकर एक दूसरे से प्रेम रखने की प्रतिज्ञा ली और एक दूसरे ने अपने बीच में कोई भेद की बात नहीं रखी । लक्ष्मण ने श्रीराम का सारा पुराना इतिहास सुनाया ।

कह सुग्रीव नयन भरि बारी ।
मिलिहि नाथ मिथिलेस कुमारी ।।
मंत्रिन्ह सहित इहां इक बारा ।
बैठ रहउं मैं करत बिचारा ।।
गगन पंथ देखी मैं जाता ।
परबस परि बहुत बिलपाता ।।
राम राम 'हा राम' पुकारी ।
हमहिं देखि दीन्हेउ पट डारी ।।

तब सुग्रीव ने आंखों में जल भरकर कहा, "हे नाथ ! मिथिलेश कुमारी सीताजी मिल जायंगी । अभी कुछ दिन पहले मैं यहां अपने मंत्रियों के साथ बैठा हुआ कुछ विचार कर रहा था कि तभी मैंने सीताजी को दूसरे के वश में पड़ी हुई और बिलखती हुई आसमान के रास्ते से जाते हुए देखा । उन्होंने भी हमें देखा और 'राम ! राम, हा राम' कहकर एक कपड़ा डाल दिया । श्रीराम ने सुग्रीव से तुरन्त उस कपड़े को मांगा ।

मांगा राम तुरत तेहिं दीन्हा।
पट उर लाई सोच अति कीन्हा॥

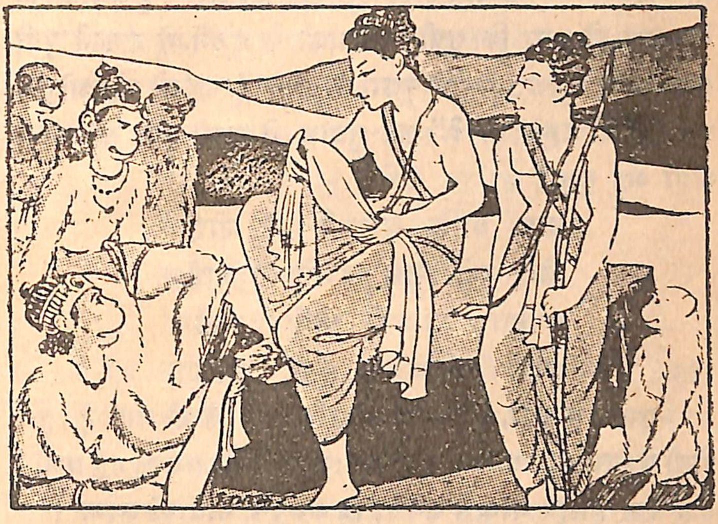

श्रीराम ने सीता का कपड़ा पहचान लिया

सुग्रीव ने वह कपड़ा तुरंत दे दिया। उस कपड़े को श्रीराम ने अपने हृदय से लगा लिया और वह बहुत दुखी हो उठे।

कह सुग्रीव सुनहु रघुबीरा।
तजहु सोच मन आनहु धीरा॥
सब प्रकार करिहउं सेवकाई।
जेहि विधि मिलिहिं जानकी आई॥

यह देखकर सुग्रीव बोले, "हे रघुनाथजी! आप दुखी न हों। मन में धीरज धारण करें। मैं वे सभी प्रयत्न करूंगा जिनसे जानकीजी आपको मिल सकती हैं।"

सखा बचन सुनि हरषे, कृपासिंधु बलसींव ।
कारन कवन बसहु बन, मोहि कहहु सुग्रीव ।।

सुग्रीव की यह बात सुनकर श्रीराम बड़े प्रसन्न हुए । उनको विश्वास हो गया कि सुग्रीव सीताजी के ढूंढ़ने में उनकी पूरी मदद करेंगे । फिर उन्होंने पूछा, "सुग्रीव ! यह तो बताओ तुम वन में क्यों रहते हो ?" तब सुग्रीव ने अपने दुख की सारी कथा कह सुनाई ।

नाथ बालि अरु मैं द्वौ भाई ।
प्रीति रही कुछ बरनि न जाई ।।
मयसुत मायावी तेहि नाऊं ।
आया सो प्रभु हमरे गाऊं ।।

सुग्रीव ने कहा, "हे नाथ ! बालि और मैं दो भाई हैं । हम दोनों में ऐसा प्रेम था कि उसको बताया नहीं जा सकता । हे प्रभो ! एक बार हमारे गांव में मय दानव का पुत्र मायावी आया ।"

अर्ध राति पुर द्वार पुकारा ।
बाली रिपु बल सहै न पारा ।।
धावा बालि देखि सो भागा ।
मैं पुनि गयऊं बंधु संग लागा ।।

उसने आधी रात के समय नगर के दरवाजे पर आकर ललकार लगाई । बालि दुश्मन के बल को सहन नहीं कर सका । उसके पीछे दौड़ा । बालि को देखकर मायावी भागा । मैं भी अपने भाई के पीछे-पीछे चला गया ।

गिरिबर गुहां पैठ सो जाई ।
तब बाली मोहिं कहा बुझाई ।।

परखेसु मोहि एक पखवारा।
नहिं आवौं तब जानेसु मारा।।

इससे आगे की कथा कहते हुए सुग्रीव ने बताया कि मायावी एक पर्वत की गुफा में घुस गया। तब बालि ने मुझे समझाकर कहा कि तुम यहीं पर बैठे हुए पंद्रह दिन तक मेरी बाट जोहना। अगर मैं इतने दिनों में वापस न आऊं तो समझ लेना कि मैं मारा गया।

मास दिवस तह रहेउं खरारी।
निसरी रुधिर धार तहं भारी।।
बालि हतेसि मोहि मारिहि आई।
सिला देइ तहं चलेउं पराई।।

मैं एक महीने तक वहीं अपने भाई की बाट देखता रहा। लेकिन वह नहीं आया। उसके स्थान पर एक दिन गुफा के अंदर से खून की एक पतली-सी धार बाहर आई। मैंने समझा कि मेरा भाई बालि मारा गया। मैं उस गुफा के मुंह पर एक पत्थर रखकर घर चला आया। मैंने गुफा के मुंह पर पत्थर इस डर से रखा था कि कहीं मायावी बाहर आकर मुझे भी न मार डाले।

मंत्रिन्ह पुर देखा बिनु साईं।
दीन्हेउ मोहि राज बरिआई।।
बाली ताहि मारि गृह आवा।
देखि मोहि जिय भेद बढ़ावा।।

जब मंत्रियों ने नगर को बिना राजा के देखा तो उन्होंने यह समझकर कि बालि तो मारा ही गया, मुझे राजा बना दिया। लेकिन कुछ दिन बाद वह मायावी को मारकर गुफा से निकलकर घर लौट आया। मुझे राजगद्दी पर बैठा देखकर उसके मन

में भेद पैदा हो गया। उसने समझा कि राज्य के लोभ से मैंने गुफा के मुंह पर पत्थर ढका था।

फिर तो उसने मुझे अपना दुश्मन समझकर बहुत मारा। उसने मेरा सब-कुछ छीन लिया। यहां तक कि उसने मेरी स्त्री भी छीन ली। उसके डर से भागकर मैं इस पहाड़ी पर आकर रहने लगा हूं। बालि शाप के कारण यहां नहीं आ सकता, लेकिन फिर भी मैं उससे सदा डरता रहता हूं।

सुनि सेवक दुख दीनदयाला।
फरकि उठीं द्वै भुजा बिसाला।।

श्रीराम ने सुग्रीव की दुखभरी कथा सुनी तो उनकी भुजाएं फड़कने लगीं। उनके हृदय में सुग्रीव के लिए दया-भावना पैदा हो गई। उन्होंने सुग्रीव को धीरज बंधाते हुए कहा—

सुनु सुग्रीव मारिहउं, बालिहि एकहिं बान।
ब्रह्म रुद्र सरनागत, गए न उबरहिं प्रान।।

"हे सुग्रीव! सुनो मैं एक ही बाण से बालि को मार डालूंगा। ब्रह्मा और रुद्र की शरण में जाने पर भी उसके प्राण नहीं बचेंगे।"

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी।
तिन्हहिं बिलोकत पातक भारी।।
निज दुख गिरि सम रज करि जाना।
मित्र के दुख रज मेरु समाना।।

"हे सुग्रीव! जो मित्र के दुख को देखकर दुखी नहीं होते उनके देखने से भारी पाप लगता है। अपने पहाड़ के समान दुख को तो धूल की तरह और मित्र के धूल की तरह के दुख को सुमेरु पर्वत की तरह समझना चाहिए।"

कुपथ निवारि सुपंथ चलावा ।
गुन प्रकटै अवगुनहिं दुरावा ।।
देत लेत मन संक न धरई ।
बल अनुमान सदा हित करई ।।

राम कहने लगे, "हे सुग्रीव ! मित्र का कर्तव्य है कि वह अपने मित्र को बुरे मार्ग से हटाकर अच्छे मार्ग पर चलाये और उसके दोषों को छिपाकर उसके गुणों को प्रगट करे ।"

उन्होंने बताया कि मित्र को लेते और देते समय कभी कोई शंका नहीं करनी चाहिए । अपने बल के अनुसार एक मित्र को अपने दूसरे मित्र की सदा भलाई करनी चाहिए ।

इससे आगे श्रीराम ने मित्र और दुश्मन दोनों के बारे में बड़े विस्तार के साथ बहुत-सी बातें बताईं और अखीर में उन्होंने सुग्रीव को धीरज बंधाते हुए कहा—

सेवक सठ नृप कृपन कुनारी ।
कपटी मित्र सूल सम चारी ।।
सखा सोच त्यागहु बल मोरें ।
सब विधि घटब काज मैं तोरे ।।

"मूर्ख सेवक, कंजूस राजा, कुलटा स्त्री, और कपटी मित्र ये चारों कांटे की तरह पीड़ा देनेवाले होते हैं । हे मित्र ! अब तुम सब-कुछ मुझ पर छोड़ दो, चिंता मत करो । मैं सब तरह से तुम्हारी सहायता करूंगा ।"

कह सुग्रीव सुनहुं रघुबीरा ।
बालि महा बल अति रनधीरा ।।

दुंदुभि अस्थि ताल देखराए।
बिनु प्रयास रघुनाथ ढहाए।।

सुग्रीव ने श्रीराम से कहा, "हे रघुवीर सुनो, बालि बड़ा बलवान और रणधीर है।" सुग्रीव ने रामचन्द्रजी को दुंदुभि, राक्षस की हड्डियां और ताल के वृक्ष दिखाये। उन्होंने उन सब वृक्षों को बिना किसी विशेष प्रयास के एक ही बाण में ढा दिया।

अब तो सुग्रीव का मन विश्वास से भर उठा। उसने समझ लिया कि रामचन्द्रजी बड़े बलवाले हैं और वह बालि को जरूर मार देंगे। उसके हृदय में राम के लिए और अधिक प्रेम बढ़ गया। उसने बार-बार श्रीरामचन्द्रजी के चरणों में अपना मस्तक झुकाया और बोला, "हे राम, अब मेरा मन स्थिर हो गया है। मेरे मन की चंचलता दूर हो गई। मैं आपके चरणों की भक्ति चाहता हूं।"

सुख संपति परिवार बड़ाई।
सब परिहरि करिहउं सेवकाई।।
ये सब राम भगति के बाधक।
कहहिं संत तव पद अवराधक।।
सत्रु मित्र सुख दुख जग माहीं।
मायाकृत परमारथ नाहीं।।

सुग्रीव कहने लगा, "हे राम ! अब मैं सुख, संपत्ति, परिवार सबको छोड़कर केवल आपकी सेवा करना चाहता हूं। मुझे अब ये सब नहीं चाहिए, क्योंकि इन सबके कारण तो आपकी भक्ति में बाधा ही पड़ती है। ऐसा वे संतजन कहते हैं जो आपके

चरणों की आराधना करते हैं।"

सुग्रीव ने राम-भक्ति में लीन होकर ज्ञान की बहुत-सी बातें कहनी शुरू कर दीं। उसने कहा, "संसार में शत्रु, मित्र, सुख और दुख जितनी भी बातें हैं वे सब माया में लिपटी हुई हैं। उनसे परमार्थ की सिद्धि नहीं हो सकती।"

इन ज्ञान की बातों के साथ-साथ सुग्रीव ने यह भी प्रगट कर दिया कि अब वह अपने भाई बालि से भी कोई द्वेष-भाव नहीं रखेगा।

बालि परम हित जासु प्रसादा।
मिलेहु राम तुम्ह समन विषादा॥
सपनें जेहि सन होहि लराई।
जागे समुझत मन सकुचाई॥
अब प्रभु कृपा करहु यहि भांति।
सब तजि भजनु करौं दिन राती॥

सुग्रीव कहने लगा, "बालि तो मेरा बड़ा हितैषी है, क्योंकि उसी के कारण तो संसार के दुखों का नाश करनेवाले राम मुझे मिले। अब तो यदि स्वप्न में भी मेरी बालि से लड़ाई हो जाय तो जागते ही मेरा मन उसकी याद करके संकोच में पड़ जायगा। इसलिए हे राम ! अब तो ऐसी कृपा कीजिये कि मैं सब बातों को छोड़कर रात-दिन आपका ही भजन किया करूं।"

सुनि बिराग संजुत कपि बानी।
बोले बिहंसि राम धनु पानी॥
जो कछु कहेहु सत्य सब सोई।
सखा बचन मम मृषा न होई॥

सुग्रीव की इस तरह की वैराग्यभरी बातें सुनकर राम हँसने लगे। उन्होंने कहा, "मित्र ! जो तुम कहते हो ठीक है, परंतु मैंने जो तुमको वचन दिया है वह भी झूठा नहीं होगा। अर्थात् बालि मारा जायगा और तुम्हें राज्य मिलेगा, सो तुम मेरे बल पर विश्वास रखो और भय छोड़कर युद्ध करो।"

: १० :

बालि-वध

लै सुग्रीव संग रघुनाथा।
चले चाप सायक गहि हाथा॥
तब रघुपति सुग्रीव पठावा।
गर्जेसि जाइ निकट बल पावा॥

रामचन्द्रजी सुग्रीव को साथ लेकर और हाथों में धनुष-बाण उठाकर चल पड़े। आगे चलकर उन्होंने सुग्रीव को बालि के पास भेज दिया। वह उनसे बल पाकर बालि के पास पहुंचकर ललकारने लगा।

सुनत बालि क्रोधातुर धावा।
गहि कर चरन नारि समुझावा॥
सुनु पति जिन्हहिं मिलेउ सुग्रीवा।
ते द्वौ बंधु तेज बल सींवा॥

बालि सुग्रीव की ललकार सुनकर क्रोध में भरकर दौड़ा। उसकी स्त्री तारा ने अपने पति के पैर पकड़ लिये और उसको समझाते हुए कहा, "हे पति सुनो ! जिनसे सुग्रीव मिला है, वे दोनों भाई बड़े तेजस्वी और बलवान हैं। वे युद्ध में काल

को भी जीत सकते हैं। इसलिए तुम घर से बाहर मत जाओ। सुग्रीव से लड़ाई लड़ने की कोई आवश्यकता नहीं।"

बालि ने अपनी स्त्री को समझाते हुए कहा, "हे डरपोक नारी ! श्रीराम समदर्शी हैं। वह मुझे मार भी देंगे तो परमपद पा जाऊंगा।"

अस कहि चला महा अभिमानी।
तृन समान सुग्रीवहिं जानी॥
भिरे उभौ बालि अति तर्जा।
मुठिका मारि महाधुनि गर्जा॥

ऐसा कहकर महा अभिमानी बालि सुग्रीव को तिनके के समान समझकर उससे लड़ने के लिए चल दिया। वे दोनों आपस में भिड़ गए। बालि ने सुग्रीव को बहुत धमकाया और घूंसा मारकर बड़े जोर से गर्जने लगा।

तब सुग्रीव विकल होइ भागा।
मुष्टिप्रहार बज्र सम लागा॥
मैं जो कहा रघुबीर कृपाला।
बंधु न होइ मोर यह काला॥

बालि का घूंसा लगने पर सुग्रीव व्याकुल होकर भागा। घूंसे की चोट उसे वज्र की तरह लगी। उसने राम के पास आकर कहा, "हे कृपालु ! मैंने आपसे पहले ही कहा था कि बालि मेरा भाई नहीं है, बल्कि मेरा काल है।"

एक रूप तुम्ह भ्राता दोऊ।
तेहि भ्रम तें मारेउं सोऊ॥

कर परसा सुग्रीव सरीरा।
तनु भा कुलिस गई सब पीरा॥

श्रीराम बोले, "तुम दोनों भाइयों का एक-सा ही रूप है। इसी भ्रम में मैंने बालि को नहीं मारा।" इतना कहकर उन्होंने सुग्रीव के शरीर पर हाथ फेरा। ऐसा करते ही उसका शरीर वज्र की तरह हो गया और उसकी पीड़ा भी जाती रही।

मेली कंठ सुमन कै माला।
पठवा पुनि बल देहि बिसाला॥
पुनि नाना विधि भई लराई।
विटप ओट देखहिं रघुराई॥

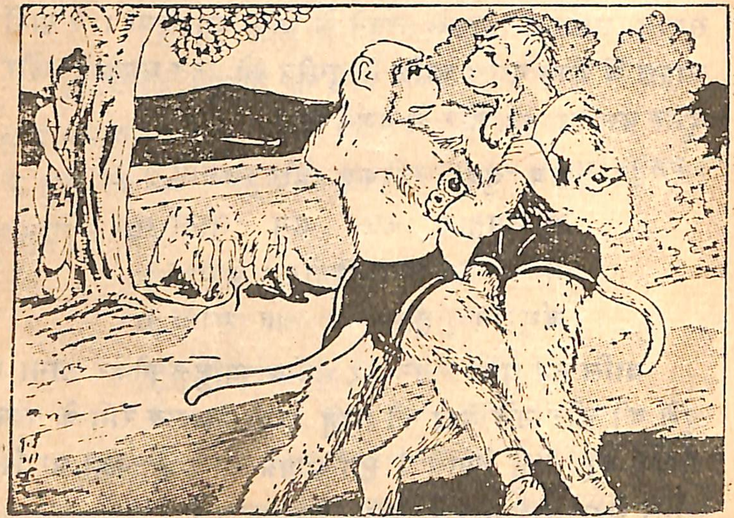

सुग्रीव ने बहुत छल-बल से युद्ध किया

इसके बाद श्रीराम ने सुग्रीव के गले में फूलों की माला पहना दी। उन्होंने उसे बड़ा भारी बल देकर फिर बालि के पास

भेजा। उन दोनों की फिर खूब लड़ाई हुई। रामचन्द्रजी एक पेड़ की ओट में खड़े देखते रहे।

बहु छल बल सुग्रीव कर, हियं हारा भय मानि।
मारा बालि राम तब, हृदय मांझ सर तानि।।

सुग्रीव ने बहुत छल-बल के साथ युद्ध किया, परंतु वह हृदय में भय मानकर हार गया। तब श्रीराम ने एक बाण तानकर बालि की छाती में मारा। बाण के लगते ही बालि जमीन पर व्याकुल होकर गिर पड़ा। फिर वह संभला और उठकर बैठ गया। उसने अपने सामने रामचन्द्र को खड़ा देखा। वह उनको बार-बार देखने लगा। उसके हृदय में राम का प्रेम भर गया। वह उनकी तरफ देखकर कहने लगा—

धर्म हेतु अवतरेहु गोसाइं।
मारेहु मोहिं व्याध की नाईं।।
मैं बैरी सुग्रीव पियारा।
अवगुन कवन नाथ मोहिं मारा।।

"हे स्वामी! आपने तो धर्म की रक्षा के लिए अवतार लिया है। मुझे आपने शिकारी की तरह छिपकर मारा है। मैं आपका बैरी हूं और सुग्रीव आपका प्यारा है, ऐसा क्यों है? आपने मुझे किस कसूर पर मारा है? यह आप मुझे बता दीजिए।"

अनुजबधू भगिनी सुतनारी।
सुनु सठ ये कन्या सम चारी।।
इन्हहिं कुदृष्टि बिलोकइ जाई।
ताहि बधे कछु पाप न होई।।

श्रीराम ने बालि को उत्तर दिया, "हे मूर्ख सुन! छोटे

भाई की स्त्री, बहन, पुत्र की स्त्री और कन्या ये चारों समान होती हैं। इनकी ओर जो बुरी नजर से देखता है, उसे मारने में कोई पाप नहीं लगता।"

मूढ़ तोहि अतिसय अभिमाना।
नारि सिखावन करसि न काना॥
मम भुजबल आश्रित तेहि जानी।
मारा चहसि अधम अभिमानी॥

"हे मूर्ख, तुझे बड़ा भारी घमंड हो गया था। तूने अपनी स्त्री के कहने पर भी कोई ध्यान नहीं दिया। सुग्रीव ने मेरी भुजाओं के बल का सहारा ले लिया था, ऐसा जानते हुए भी तूने उसे मारना चाहा।"

सुनहु राम स्वामी सन, चल न चातुरी मोरि।
प्रभु अजहूं मैं पापी, अंतकाल गति तोरि॥

रामचन्द्रजी की बात सुनकर बालि कहने लगा, "आप तो संसार के स्वामी हैं। आपसे मेरी कोई चतुराई नहीं चल सकती। आप यह तो बताइये कि अंत काल में आपके दर्शन पाकर भी क्या मैं पापी ही रहा ?"

सुनत राम अति कोमल बानी।
बालि सीस परसेउ निज पानी॥
अचल करौं तनु राखहुं प्राना।
बालि कहा सुनु कृपानिधाना॥

श्रीराम ने बालि की प्रेमभरी कोमल बात सुनकर उसके सिर पर अपना हाथ फेरा। उन्होंने बालि से कहा, "मैं तुम्हारे शरीर को जीवित किये देता हूं, तुम अपने प्राणों को यदि रखना

चाहते हो तो रख सकते हो।" बालि ने उनसे कहा, "हे कृपा-निधान, मुझे अपने प्राण अब नहीं चाहिए।"

जन्म जन्म मुनि जतनु कराहीं।
अंत राम कहि आवत नाहीं।।
जासु नाम बल संकर कासी।
देत सबहि सम गति अबिनासी।।
मम लोचन गोचर सोइ आवा।
बहुरि की प्रभु अस बनहि बनावा।।

"मुनि लोग जन्म-जन्म तरह-तरह की कोशिश करते हैं, लेकिन अंत समय में उनके मुख से 'राम' नहीं निकलता। जिनके नाम के बल से भगवान शंकर काशी में सबको समान रूप से मुक्ति देते हैं, वे ही श्रीराम मेरी आंखों के सामने आ गए हैं। हे प्रभो ! ऐसा मिलाप क्या फिर कभी हो सकता है ?"

अब नाथ करि करुना बिलोकहु देहु जो बर मांगऊं।
जेहि योनि जन्मौं कर्म बस तहं राम पद अनुरागऊं।।
यह तनय सम मम विनय बल कल्यानप्रद प्रभु लीजिये।
गहि बांह सुर नर नाह आपन दास अंगद कीजिये।।

"हे नाथ, आप मेरी ओर कृपा की दृष्टि से देखिये। मैं आप से यह वर मांगता हूं कि जिस-जिस योनि में अपने कर्मों के अनुसार जन्म पाऊं, उसीमें मैं आपका प्रेम-पात्र बना रहूं।"

फिर बालि ने अपने पुत्र अंगद की ओर संकेत करते हुए कहा, "हे राम, यह मेरा पुत्र अंगद मेरी तरह से ही विनम्र और बल-वान हो। इसका आप कल्यान कीजिये। आप इसकी बांह पकड़कर इसे अपना सेवक बना लीजिये, यही मेरी आपसे अंतिम

विनती है ।"

यह सुनकर राम ने अंगद की ओर बड़े प्रेम के साथ देखा । उसके पिता की अंतिम इच्छा के अनुसार उन्होंने अंगद को अपनी शरण में ले लिया । फिर राम ने बालि को तसल्ली देते हुए कहा, "तुम अंगद की कोई चिंता न करो । वह मेरे लिए अत्यंत प्यारा है ।"

राम चरन दृढ़ प्रीति करि, बालि कीन्ह तनु त्याग ।
सुमन माल जिमि कंठ ते, गिरत न जानइ नाग ।।

इस तरह श्रीरम के चरणों में दृढ़ प्रीति करके बालि परलोक सिधार गया । उसने इस प्रकार शरीर छोड़ा, जिस प्रकार हाथी अपने गले से फूलों की माला का गिरना न जाने । बालि की मृत्यु से सारे नगर में दुख छा गया । उसकी स्त्री तारा विलाप करने लगी । वह बुरी तरह से व्याकुल हो गई ।

तारा विकल देखि रघुराया ।
दीन्ह ग्यान हरि लीन्हीं माया ।।

तारा को व्याकुल देखकर श्रीराम ने उसे ज्ञान दिया और समझाया । उन्होंने उसके सारे मोह को दूर कर दिया । उन्होंने कहा, "संसार में जीना और मरना दोनों ही साथ-साथ चलते हैं, कहीं जीवन है, तो कहीं मरण ।"

इसके बाद श्रीराम ने सुग्रीव से कहा कि वह बालि की देह का ठीक तरह से अंतिम संस्कार करे । सुग्रीव ने आज्ञा पाते ही अपने बड़े भाई बालि का विधिपूर्वक दाहकर्म किया । उसने भी अपने भाई बालि के मरने का बड़ा दुख माना ।

राम कहा अनुजहि समुझाई।
राज देहु सुग्रीवहि जाई ।।
रघुपति चरन नाइ करि माथा।
चले सकल प्रेरित रघुनाथा ।।

बालि का दाह-संस्कार हो जाने पर जब कुछ शोक कम हुआ तो श्रीराम ने अपने भाई लक्ष्मण को समझाकर कहा, "तुम नगर में जाओ और सुग्रीव का राजतिलक कर आओ।" श्रीराम वनवास में होने से स्वयं नगर में नहीं जा सकते थे और बालि के स्थान पर दूसरे व्यक्ति का राजा बनाया जाना बहुत आवश्यक था।

राम की आज्ञा पाकर सबने अपना मस्तक उनके चरणों में झुकाया। वे सब सुग्रीव को राजगद्दी पर बिठाने के लिए चल दिए।

लछिमन तुरत बोलाए, पुरजन विप्र समाज।
राज दीन्ह सुग्रीव कहं, अंगद कहं जुबराज ।।

लक्ष्मणजी रामचन्द्रजी की आज्ञा पाकर नगर की ओर चल दिए। नगर में पहुंचकर उन्होंने सारे नगरवासियों को इकट्ठा किया। उन्होंने ब्राह्मणों के समाज को भी बुलाया। उन सबके सामने उन्होंने सुग्रीव को राजगद्दी पर बिठाया और अंगद को युवराज बना दिया।

राजतिलक हो जाने के बाद श्रीराम ने सुग्रीव को अपने पास बुलवाया और राजनीति का उपदेश दिया। उसे सारा राजधर्म भी बताया।

कह प्रभु सुनु सुग्रीव हरीसा ।
पुर न जाऊं दस चारि बरीसा ।।
गत ग्रीषम बरषा ऋतु आई ।
रहिहउं निकट सैल पर छाई ।।
अंगद सहित करहु तुम राजू ।
संतत हृदय धरेहु मम काजू ।।

उन्होंने सुग्रीव से कहा, "हे वानरपति सुग्रीव सुनो ! मैं चौदह वर्ष तक बस्ती में नहीं जाऊंगा । गर्मी का मौसम बीत गया है और वर्षा-ऋतु आ गई है । अब मैं यहां पास ही किसी एक पर्वत पर निवास करूंगा और वहींपर चतुर्मास बिताऊंगा । तुम अंगद को लेकर राज करो । मेरे काम का तुम अपने मन में सदा ध्यान रखना ।"

सुग्रीव ने राम को विश्वास दिलाया कि वह वर्षा समाप्त होते ही सीताजी की खोज में लगेगा ।

: ११ :

वर्षा-वर्णन

जब सुग्रीव भवन फिरि आये ।
राम प्रबरषन गिरि पर छाये ।।

इसके बाद सुग्रीव नगर में आ गया और श्रीराम अपने भाई लक्ष्मण के साथ प्रवर्षण पर्वत पर चले गए ।

प्रथमहि देवन्ह गिरि गुहा, राखेउ रुचिर बनाइ ।
राम कृपानिधि कछुक दिन, वास करहिंगे आइ ।।

देवताओं ने उस पहाड़ की एक सुंदर गुफा को श्रीराम के

रहने के लिए पहले से ही ठीक और सुंदर बना रखा था। दोनों भाई उस गुफा में रहने लगे। उस गुफा में वर्षा से बचने का पूरा प्रबंध था।

सुंदर बन कुसुमित अति सोभा।
गुंजत मधुप निकर मधु लोभा॥
कंद मूल फल पत्र सुहाए।
भए बहुत जबतें प्रभु आये॥

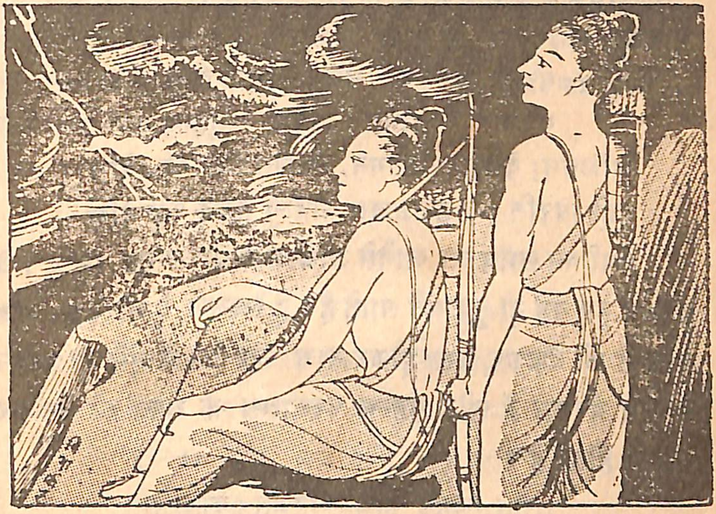

'वर्षा काल मेघ नभ छाये'

उन दिनों सारा वन पुष्पों से फूल रहा था। भौरों के झुंड-के-झुंड शहद के लोभ में उनपर गूंज रहे थे। फल-फूल वृक्षों पर लद रहे थे। चारों ओर हरियाली छा रही थी। वन के पक्षी मधुर शब्द कर रहे थे।

फटिक सिला अति सुभ्र सुहाई ।
सुख आसीन तहां द्वौ भाई ।।
कहत अनुज सन कथा अनेका ।
भगति बिरति नृपनीति विवेका ।।

एक सुंदर पत्थर की शिला पर दोनों भाई बड़े आनंद के साथ विराजमान हुए । श्रीराम अपने छोटे भाई लक्ष्मण को भक्ति, वैराग, राजनीति और ज्ञान की बहुत-सी कथा सुनाने लगे ।

रामचन्द्रजीने वर्षा का वर्णन करते हुए अपने भाई लक्ष्मण से कहा—

बरषा काल मेघ नभ छाए ।
गरजत लागत परम सुहाए ।।
लछिमन देखहु मोर गन, नाचत वारिद पेखि ।
गृही बिरति रत हरष जस, विष्नु भगत कहुं देखि ।।

वर्षा का समय आ जानेसे आकाश में बादल छा रहे हैं । वे गरजते हुए बड़े ही सुहावने लगते हैं। हे लक्ष्मण ! मोरों का झुंड बादलों को देखकर मस्त होकर नाच रहा है । ये ऐसे ही प्रसन्न हैं जैसे वैराग्य में लीन गृहस्थ परमात्मा के भक्त को देखकर प्रसन्न होता है ।

घन घमंड नभ गरजत घोरा ।
प्रियाहीन डरपत मन मोरा ।।
दामिनी दमक रह न घन माहीं ।
खल कै प्रीति जथा थिर नाहीं ।।

"आकाश में बादलों का समूह घोर गर्जना कर रहा है । उसका शब्द सुनकर सीता के बिना मेरा मन डरता है। बिजली

जोर से चमकती है, परंतु यह बादलों में ठहर नहीं पाती, वैसे ही जैसे दुष्ट मनुष्यों का प्रेम नहीं ठहरता।

बरसहिं जलद भूमि निअराएं।
जथा नवहिं बुध विद्या पाएं॥
बूंद अघात सहहिं गिरि कैसे।
खल के बचन संत सह जैसे॥

"बादल पृथ्वी के पास आ-आकर बरस रहे हैं, जैसे पंडित विद्या पाकर झुक जाते हैं। विद्या से उनमें नम्रता पैदा हो जाती है। पर्वतों पर जो बूंदों की चोट पड़ती है, उन्हें पर्वत ऐसे ही सहन कर रहे हैं, जैसे संत जन दुष्ट मनुष्यों की बातों को चुपचाप सहन कर लेते हैं।

छुद्र नदी भरि चलीं तोराई।
जस थोरेहुं धन खल इतराई॥
भूमि परत भा ढाबर पानी।
जनु जीवहिं माया लपटानी॥
सिमिटि सिमिटि जल भरहिं तलाबा।
जिमि सदगुण सज्जन पहिं आवा॥
सरिता जल जलनिधि महुं जाई।
होइ अचल जिमि जिव हरि पाई॥

"ये छोटी-छोटी नदियां बड़े जोर से किनारों से भी बाहर निकलकर ऐसे बह रही हैं जैसे थोड़ा-सा धन पा लेने पर दुष्ट मनुष्य इतरा जाते हैं। पृथ्वी पर वर्षा का पानी पड़ते ही गंदला हो जाता है, जैसे जीव को माया लिपट जाती है। वर्षा का पानी इकट्ठा होकर तालाबों में ऐसे भर रहा है, जैसे सारे अच्छे गुण

इकट्ठे होकर सज्जनों में आ जाते हैं। नदियों का पानी समुद्र में जाकर वैसे ही ठहर जाता है, जैसे भगवान को पाकर मनुष्य का जीवात्मा उसमें ही रम जाता है, अचल हो जाता है।

"वर्षा के कारण खेतों में हरियाली छा गई है, मार्गों में खोजने पर भी धूल नहीं मिलती, क्योंकि वर्षा पड़ने से धूल बैठ गई है। लहराते हुए खेतों के कारण पृथ्वी ऐसी ही शोभामयी हो गई है, जैसे किसी उपकारी मनुष्य की संपत्ति दूसरों को लाभ देनेवाली हो जाती है।"

ससि सम्पन्न सोह महि कैसी।
उपकारी कै सम्पति जैसी॥

रामचन्द्र जी अपने भाई लक्ष्मण को बताते हैं कि वर्षा के दिनों में चतुर किसान अपने खेतों को निराते हैं। वे घास-फूस को खेतों से निकालकर ऐसे ही फेंक देते हैं, जैसे पंडित लोग मोह, घमंड और अभिमान को त्याग देते हैं।

कृषि निरावहिं चतुर किसाना।
जिमि बधु तजहिं मोह मद माना॥
देखिअत चक्रवाक खग नाहीं।
कलिहि पाइ जिमि धर्म पराहीं॥

राम वर्षा के पक्षियों का वर्णन करते हुए कहते हैं, "वर्षा ऋतु के कारण चक्रवाक पक्षी कहीं दिखाई नहीं दे रहे हैं, जैसे कलियुग में धर्म दूर भागता है, वैसे ही वे भी चले गए हैं।"

ऊसर बरषइ तृन नहीं जामा।
जिमि हरिजन हियं उपज न कामा॥

बिबिध जन्तु संकुल महि भ्राजा।
प्रजा बाढ़ जिमि पाइ सुराज़ा।।

राम ऊसर भूमि में वर्षा पड़ने की बात का वर्णन करते हुए कहते हैं, "लक्ष्मण ! ऊसर में वर्षा होती है, फिर भी उस में तिनका तक नहीं उगता, जैसे भगवान के भक्त के हृदय में कभी कामवासना पैदा नहीं होती ।"

वर्षा के कारण भूमि पर अनेक जीव-जंतु पैदा हो गए हैं। राम इनको देखकर कहते हैं, "लक्ष्मण ! अनेक प्रकार के जीव-जंतुओं से भूमि ऐसे ही शोभायमान हो रही है, जैसे सुराज्य को पाकर प्रजा बढ़ती है ।"

राम फिर बोले, "वर्षा के कारण मार्ग में चलनेवाले बटोही जहां-तहां ठहर गए हैं, उन्होंने रास्ता चलना बंद कर दिया है। वर्षा समाप्त हो जाने पर वे भी अपना रास्ता चलना प्रारंभ करेंगे ।

कबहुं प्रबल बह मारुत, जहं तहं मेघ बिलाहिं।
जिमि कपूत कें ऊपजे, कुल सद्धंम नसाहिं ॥

"कभी हवा तेज चलने लगती है, और जहां-तहां बादल गायब हो जाते हैं, जैसे कि कुपुत्र के उत्पन्न हो जाने से कुल का धर्म नष्ट हो जाता है।

कबहुं दिवस मह निविड़ तम, कबहुंक प्रकट पतंग।
बिनुसइ उपजइ ग्यान जिमि, पाइ कुसंग सुसंग ॥

"कभी दिन में घोर अंधेरा छा जाता है, और कभी सूर्य निकल आता है। जैसे अच्छी संगति पाकर ज्ञान उत्पन्न होता है और कुसंगति से नष्ट हो जाता है।"

इस तरह से राम और लक्ष्मण दोनों भाई प्रकृति का आनंद लेते हुए चौमासा बिताने लगे ।

: १२ :

शरद-वर्णन

वर्षा बीत गई । शरद ऋतु आ गई । श्रीराम लक्ष्मणजी से कहने लगे—

वरषा बिगत सरद रितु आई ।
लछिमन देखहु परम सुहाई ।।
फूलें कास सकल महि छाई ।
जनु बरषां कृत प्रगट बुढ़ाई ।।

"लक्ष्मण, वर्षा का मौसम बीत चुका है और अब सर्दी की ऋतु आ गई है । फूला हुआ कांस सारी भूमि पर छा गया है। ऐसा लगता है, जैसे वर्षा ऋतु अपना बुढ़ापा प्रकट कर रही है ।

उदित अगस्ति पंथ जल सोषा ।
जिमि लोभहि सोषइ संतोषा ।।
सरिता सर निर्मल जल सोहा ।
संत हृदय जस गत मद मोहा ।।

"अगस्त तारे ने उदित होकर रास्तों के पानी को इस तरह से सोख लिया है जैसे संतोष लोभ को सोख लेता है । नदियों और तालाबों का साफ जल इस तरह शोभा पा रहा है जिस प्रकार मद और मोह से रहित होकर संतों का हृदय ।

रस रस सूख सरित सर पानी ।
ममता त्याग करहिं जिमि ग्यानी ।।

जानि सरद रितु खंजन आए।
पाई समय जिमि सुकृत सुहाए।।

नदी और तालाबों का पानी धीरे-धीरे इस तरह सूख रहा है जैसे कि ज्ञानी मनुष्य ममता को छोड़ देते हैं। शरद ऋतु को आया जानकर खंजन पक्षी भी आ गये हैं, ऐसे ही जैसे ठीक समय पाकर मनुष्य के अच्छे कर्म प्रकट हो जाते हैं।

पंक न रेनु सोह असि धरनी।
नीति निपुन नृप कै जसि करनी।।
जल संकोच बिकल भइं मीना।
अबुध कुटुम्बी जिमि धनहीना।।

"न कहीं कीचड़ है और न धूल, इसलिए धरती ऐसी शोभा दे रही है जैसे नीति में चतुर राजा की करनी। पानी के सूख जाने पर मछलियां ऐसे ही व्याकुल हो रही हैं, जैसे मूर्ख गृहस्थी धन के बिना बेचैन हो उठता।

बिनु घन निर्मल सोह अकासा।
हरिजन इव परिहरि सब आसा।।
कहुं कहुं वृष्टि सारदी थोरी।
कोउ एक पाव भगति जिमि मोरी।।

"बिना बादलों के आसमान ऐसा सुंदर लग रहा है जैसे हरि के भक्त सब तरह की आशाओं को छोड़कर शोभा पाते हैं। कहीं-कहीं ही थोड़ी-सी वर्षा हो रही है जैसे कोई विरला मनुष्य ही मेरी भक्ति को पा जाता है।"

इस प्रकार सरदी की ऋतु आने पर और कौन-कौन-सी बातों का महत्व बढ़ जाता है, इसका बखान करते हुए श्रीराम ने लक्ष्मण

को बताया कि राजा, तपस्वी, व्यापारी और भिखारी ये सब अपने-अपने काम के लिए प्रसन्नता के साथ नगर छोड़कर चल दिये है, उसी प्रकार जिस प्रकार हरि की भक्ति को पाकर गृहस्थी चारों आश्रमों के मोह और बंधन को छोड़ देता है। तालाबों में कमल फूल रहे हैं। भौंरे गूंज रहे हैं। पक्षी तरह-तरह का मीठा शब्द करते फिरते हैं। इस तरह चारों ओर आनंद-ही-आनंद है।

अन्त में उन्होंने कहा—

बरषा गत निर्मल रितु आई।
सुधि न तात सीता कै पाई।।
एक बार कैसेहुं सुधि जानौ।
कालहु जीति निमिष महुं आनौ।।

"वर्षा समाप्त होगई और निर्मल शरद ऋतु आ गई। परंतु अभी तक सीता का कोई पता नहीं चला। अगर एक बार भी किसी तरह से पता चल जाय तो मैं काल को भी जीतकर उन्हें पलभर में ले आऊं।

: १३ :

सुग्रीव पर कोप

सुग्रीवहुं सुधि मोरि बिसारी।
पावा राज कोस पुर नारी।।
जेहिं सायक मारा मैं बाली।
तेहिं सर हतऊं मूढ़ कहं काली।।

"सुग्रीव अब मुझे भूल गया है, क्योंकि उसने राज, खजाना, नगर और स्त्री सब पा लिये हैं। लेकिन जिस वाण से मैंने वालि

को मारा था, कल मैं उसी बाण से उसको मारूंगा ।"

लछिमन क्रोधवंत प्रभु जाना ।
धनुष चढ़ाइ गहे कर बाना ।।

लक्ष्मण ने जिस समय रामचंद्रजी को क्रोध में भरा देखा तो उन्होंने धनुष चढ़ाकर बाण हाथ में ले लिये । राम समझ गये कि लक्ष्मण इसी समय सुग्रीव का वध कर डालेगा । उनके हृदय में दया का भाव उमड़ आया । उन्होंने लक्ष्मण को समझाकर कहा, "हे भाई, तुम सुग्रीव को कुछ डर दिखाकर यहां ले आओ ।"

उधर हनुमान को भी सीताजी का पता लगाने की चिंता हुई । वह भी सोचने लगे कि सुग्रीव ने श्रीराम के काम को भुला दिया । वह सुग्रीव के पास गये । उन्होंने चारों तरह की नीति सुग्रीव को समझाई ।

सुनि सुग्रीव परम भय माना ।
विषय मोर हरि लीन्हेउ ग्याना ।।
अब मारुत सुत दूत समूहा ।
पठवहु जहं तहं बानर जूहा ।।
कहहु पाख महुं आव न जोई ।
मोरें कर ताकर बध होई ।।

हनुमानजी की बातें सुनकर सुग्रीव भयभीत हो उठा और कहने लगा, "विषय-भोग के कारण मेरा ज्ञान नष्ट हो गया है । लेकिन, हे पवनसुत, अब जहां-जहां भी वानरों के झुण्ड रहते हैं वहां-वहां दूतों को भेजो और यह बात कहला दो कि पंद्रह दिन के अन्दर जो नहीं आयेगा उसको सुग्रीव अपने हाथ

से मार डालेगा।"

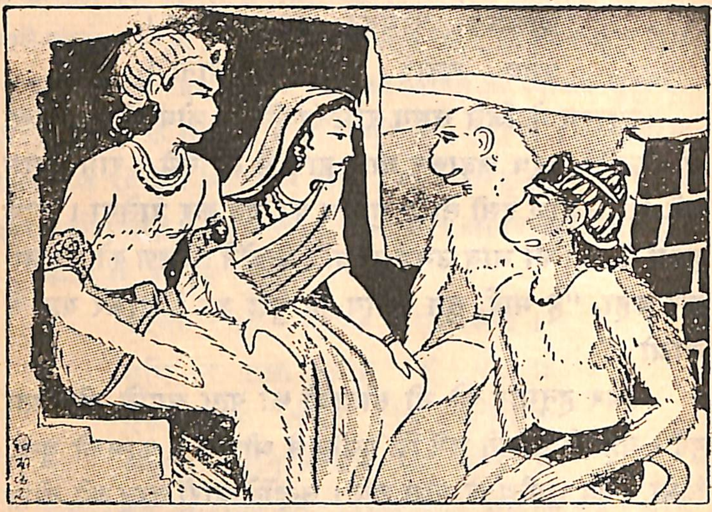

हनुमान ने चारों तरह की नीति सुग्रीव को समझाई

सुग्रीव की आज्ञा पाकर हनुमान ने सारे दूतों को बुलवाया। पहले तो उन सबका बड़ा आदर किया। फिर उनको डर, प्रेम और राजनीति से समझाया। अंत में उन्हें सुग्रीव की आज्ञा कह सुनाई। आज्ञा पाकर वे सब दूत चल दिये। इसी समय लक्ष्मणजी वहां श्रा पहुंचे। वह गुस्से में भरे हुए थे। उनको देखकर वानर जहां-तहां भागने लगे।

धनुष चढ़ाइ कहा तब जारि करउं पुर छार।
व्याकुल नगर देखि तब आयउ बालि कुमार।

लक्ष्मणजी ने धनुष चढ़ाकर कहा, "मैं नगर को श्रभी जलाकर राख कर दूंगा।" यह सुनकर और भी खलबली मच

गई । सब भय से कांप उठे । तब नगरवासियों को व्याकुल देखकर बालि के पुत्र अंगद उनके पास आये ।

अंगद ने आते ही पहले लक्ष्मणजी के चरणों में सिर नवाया । इसके बाद उन्होंने विनम्र शब्दों में क्षमा मांगी । लक्ष्मण-जी का हृदय पसीज गया । उन्होंने अपनी भुजा उठाकर अंगद से कहा, "डरो मत ।"

सुग्रीव ने जब अपने कानों से सुना कि लक्ष्मणजी क्रोध में भर रहे हैं तो वह अपनी रक्षा का उपाय ढूंढ़ने लगा । उसने हनुमान का सहारा लिया ।

सुनु हनुमन्त संग लै तारा ।
करि बिनती समुझाउ कुमारा ।।
तारा सहित जाइ हनुमाना ।
चरन बंदि प्रभु सुजस बखाना ।।

सुग्रीव ने हनुमान से कहा, "हनुमान, सुनो । तुम तारा को साथ लेकर जाओ और विनती करके किसी तरह लक्ष्मणजी को समझाओ ।"

हनुमान तारा को साथ लेकर लक्ष्मणजी के पास गये । उन्होंने उनके चरणों की वंदना की और प्रभु राम के सुंदर यश का बखान किया ।

करि बिनती मन्दिर लै आए ।
चरन पखारि पलंग बैठाए ।।
तब कपीस चरनन्हि सिर नावा ।
गहि भुज लछिमन कंठ लगावा ।।

हनुमान और तारा लक्ष्मणजी की विनती करके उन्हें महल

में ले आये। उन्होंने उनके चरणों को धोया और उन्हें पलंग पर बिठाया। सुग्रीव ने उनके चरणों में सिर झुकाया। लक्ष्मणजी ने हाथ पकड़कर सुग्रीव को अपने गले से लगा लिया।

सुग्रीव ने कहा—

नाथ विषय सम मद कछु नाहीं।
मुनि मन मोह करइ छन माहीं॥
सुनत बिनीत बचन सुख पावा।
लछिमन तेहि बहुविधि समुझावा॥

"हे नाथ, विषय के बराबर दूसरा कोई नशा नहीं है। यह ज़रा-सी देर में मुनियों के मन में भी मोह पैदा कर देता है।" इस तरह की नम्रता की बातें सुनकर लक्ष्मणजी बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने सुग्रीव को बहुत तरह से समझाया।

हनुमान ने भी लक्ष्मणजी को वे सब बातें बताईं जो अब-तक हो चुकी थीं। उन्होंने बताया कि चारों तरफ दूत भेजे जा चुके हैं। इसके बाद वे सब श्रीराम के पास चल दिये। उन्होंने लक्ष्मणजी को आगे कर लिया।

श्रीराम के पास पहुंचकर सुग्रीव ने उनसे सारी बात साफ-साफ कह दी। उसने बता दिया कि वह विषय में फंस गया था। लेकिन अब सब तरह से सेवा करने के लिए तैयार है।

तब रघुपति बोले मुसुकाई।
तुम्ह प्रिय मोहि भरत जिमि भाई॥
अब सोइ जतनु करहु मन लाई।
जेहि बिधि सीता कै सुधि पाई॥

सुग्रीव की बात सुनकर रामचंद्रजी मुस्कराकर बोले, "हे

भाई ! तुम मुझे भरत के समान प्यारे हो । अब मन लगाकर वह उपाय करो जिससे सीता का पता चले ।"

: १४ :

सीता की खोज में

इधर श्रीराम तथा सुग्रीव में यह बातें हो रही थीं, उधर वानरों के झुंड-के-झुंड इकट्ठा होने लगे। चारों ओर तरह-तरह के रंगवाले वानर दिखाई देने लगे । वे आकर रामचंद्रजी के सम्मुख माथा झुकाते। उनके दर्शन पाकर अपने को धन्य समझते। श्रीराम ने उनमें से प्रत्येक से उनकी कुशलता पूछी । इसके बाद सुग्रीव ने उनको सीताजी की खोज करने की आज्ञा दी ।

राम काजु अरु मोर निहोरा ।
बानर जूथ जाहु चहुं ओरा ।।
जनक सुता कहुं खोजहु जाई ।
मास दिवस महं आवहु भाई ।।

सुग्रीव ने वानरों से कहा, "हे वानरो, रामचंद्रजी का तो काम है और मेरा तुमसे अनुरोध है कि तुम चारों तरफ चले जाओ और सीताजी की तलाश करो । लेकिन देखो, तुम सब एक महीने के अंदर वापस आ जाना ।"

सुग्रीव ने उनसे यह भी कहा, "अगर इतने दिन के भीतर बिना खबर लिये लौटे तो मेरे हाथ से मारे जाओगे ।" सुग्रीव की आज्ञा पाते ही वे सब वानर इधर-उधर चल दिये । उनके जाने के बाद सुग्रीव ने अंगद, नल, हनुमान आदि योद्धाओं को बुलाया और कहा :

सुनहु नील अंगद हनुमाना ।
जामवंत मतिधीर सुजाना ।।
सकल सुभट मिलि दच्छिन जाहू ।
सीता सुधि पूंछेहु सब काहू ।।

"हे धीर बुद्धिवाले, चतुर नील, अंगद, हनुमान और जामवंत, तुम सब योद्धा मिलकर दक्षिण दिशा की तरफ जाओ और वहां पहुंचकर सब किसीसे सीताजी का पता पूछो ।"

सुग्रीव ने उनको समझाया कि भगवान रामचंद्रजी के काम को मन, वचन और कर्म से करना । सुग्रीव की आज्ञा पाकर वे सब बड़े हर्ष के साथ चले । चलते समय उन्होंने श्रीराम का स्मरण किया । सबने उनको सिर नवाया ।

पाछें पवन तनय सिरु नावा ।
जानि काम प्रभु निकट बोलावा ।।
परसा सीस सरोरुह पानी ।
कर मुद्रिका दीन्हि जन जानी ।।
बहु प्रकार सीतहिं समुझाएहु ।
कहि पल बिरह बेगि तुम्ह आएहु ।।

सबके बाद में हनुमानजी ने सिर झुकाया । काम का विचार करते हुए श्री रामचंद्रजी ने उनको अपने पास बुलाया । उन्होंने अपने कमलरूपी हाथ से हनुमानजी के सिर को छुआ । फिर अपना सेवक समझकर उन्हें अपने हाथ की अंगूठी दी और कहा, "तुम सीता को अनेक प्रकार से समझाना । मेरा बल और प्रेम उनको बताकर तुम बहुत जल्दी लौट आना ।"

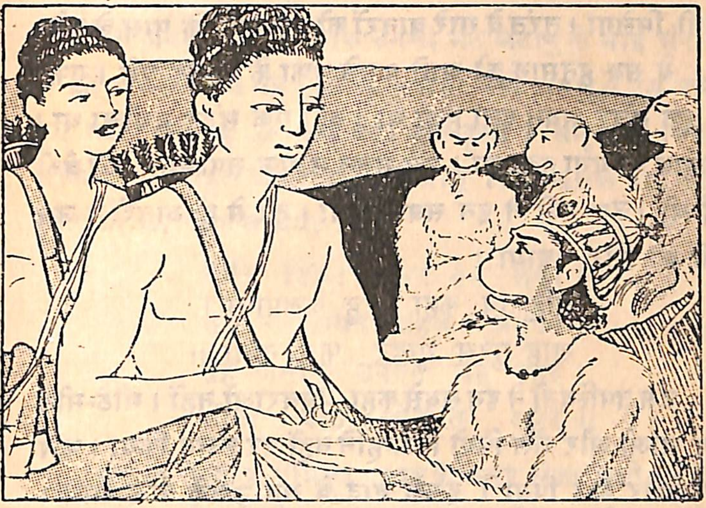

श्रीराम ने अपनी अँगूठी हनुमान को दी

हनुमानजी ने अपने प्रति श्रीराम के विशेष प्रेम को देखकर अपना जन्म सफल समझा। उनको हृदय में धारण करके वह चल दिये। वे सब वन, नदी, तालाब और पर्वतों पर ढूंढते हुए दक्षिण की तरफ चले। अगर इनको रास्ते में कोई राक्षस मिल जाता था तो ये उसके गाल पर चपत मारकर उसे गिरा देते थे। अगर उनको कोई मुनि मिल जाता था तो वे सब उसे घेर लेते थे और उससे सीताजी का पता पूछते थे।

चलते-चलते एक बार उनको बहुत प्यास लगी। कहीं पानी नहीं था, वे प्यास से तड़पने लगे। हनुमान ने जब साथियों की यह बुरी हालत देखी तो एक पहाड़ी पर चढ़कर पानी की तलाश करने लगे। उन्होंने एक गुफा को देखा। वहां पर उन्हें बगले

और हंस उड़ते हुए दिखाई दिये। उन्होंने समझ लिया कि वहां पानी मिलेगा। तुरंत वे सारे वानरों को उस गुफा के पास ले गये।

वे सब हनुमान को आगे करके गुफा के भीतर घुसे। गुफा में एक सुंदर भवन बना हुआ था। वहां एक सुंदर बगीचा था। तालाब भी बना हुआ था। उस भवन में एक तपस्विनी स्त्री बैठी हुई थी। उस स्त्री ने इन सबको देखा। दूर से ही बानरों ने उस स्त्री को सिर नवाया।

तेहिं तब कहा करहु जलपाना।
खाहु सुरस सुन्दर फल नाना॥

उस तपस्विनी ने इन सबसे कहा, "घबराओ नहीं। मीठे-मीठे फल खाओ और जल पियो।" उन्होंने वहीं पर स्नान किया। फल खाये और जल पिया। इसके बाद वे सब उसके पास आये। उन्होंने उससे सब बातें कहीं। उसने भी उन्हें अपनी बातें सुनाईं। इसके बाद वह तपस्विनी तो रामचन्द्र जी के पास चली गई और वानर उस गुफा से निकलकर समुद्र के किनारे जा पहुंचे। वहां पहुंचकर सोच में पड़ गये। जितने दिन सुग्रीव ने सीताजी की खबर लाने के लिए नियत किये थे सब खत्म हो चुके थे। यह सोचकर अंगद की आंखों में पानी भर आया। वह कहने लगा, "अब हमारी दोनों तरह से मौत है। यहां तो सीताजी का अभी तक पता नहीं चला और उधर गये तो सुग्रीव हमें मार डालेगा।"

वानर पहले तो कुछ देर चुप रहे। फिर हिम्मत करके उन्होंने कहा, "हम सीताजी का पता लगाये बिना नहीं लौटेंगे।" ऐसा कहकर वे सागर-तट पर बैठ गये। तब जामवंत उन्हें तरह-तरह की कथाएं सुनाकर कहने लगे, "राम को आप मामूली

आदमी न समझें। वह तो भगवान हैं।"

इस अवसर पर अचानक उनकी भेंट जटायु के भाई संपाति से हुई। उसने जब यह सुना कि उसका भाई रावण से युद्ध करते हुए मारा गया है तो उसे बड़ा दुख हुआ। समुद्र के किनारे जाकर उसने पहले अपने भाई का श्राद्ध किया, इसके बाद उसने सीताजी का पता बताया।

गिरि त्रिकूट ऊपर बस लंका।
तहं रह रावन सहज असंका॥
तहं असोक उपवन जहं रहई।
सीता बैठि सोचरत अहई॥

संपाति ने कहा, "त्रिकूट पहाड़ के ऊपर लंका बसी हुई है। वहां स्वभाव से ही निडर रावण रहता है। वहांपर अशोक वाटिका है। उसमें सीताजी रहती हैं। इस समय भी वह सोच में बैठी हैं।"

उसने यह भी बताया कि जो इस समुद्र को लांघकर पार जायगा वही श्रीराम के काम को पूरा करेगा। इतना कहकर संपाति चला गया।

: १५ :

हनुमान का साहस

अब वे सब आपस में सलाह करने लगे। पहले जामवंत ने कहा, "मैं तो बूढ़ा हो गया हूं। अब मुझमें पहले जैसा बल नहीं रहा है।"

अंगद कहइ जाउं मैं पारा।
जिय संसय कछु फिरती बारा ॥
जामवंत कह तुम्ह सब लायक।
पठइअ किमि सब ही कर नायक ॥

अंगद ने कहा, "मैं पार तो चला जाऊंगा, लेकिन लौटने में मुझे कुछ संदेह होता है।"

इसपर जामवंत ने उत्तर दिया, "तुम वैसे तो सब तरह से लायक हो, लेकिन तुम सबके नेता हो। इसलिए तुम्हें कैसे भेजा जा सकता है।" इतना कहकर वह हनुमान की ओर मुड़े। बोले,

कहइ रीछपति सुनु हनुमाना।
का चुप साधि रहेहु बलवाना ॥
पवन तनय बल पवन समाना।
बुधि विवेक बिग्यान निधाना ॥
कवन सो काज कठिन जग माहीं।
जो नहिं होइ तात तुम्ह पाहीं ॥
राम काज लगि तव अवतारा।
सुनतहिं भयउ पर्वताकारा ॥

"हे हनुमान सुनो! तुम बलवान होते हुए भी कैसी चुप्पी साधे हुए हो? तुम पवन के बेटे हो। बल में पवन की तरह हो। तुम बुद्धि, ज्ञान और विज्ञान की खान हो। हे तात, संसार में ऐसा कौन-सा बड़ा काम है, जो तुमसे पूरा नहीं हो सकता? रामचन्द्रजी के काम के लिए ही तो तुम्हारा अवतार हुआ है।"

जामवंत की ये बातें सुनकर हनुमानजी बड़े भारी शरीरवाले हो गये।

सिंहनाद करि बारहिं बारा।
लीलहिं नाघउं जलनिधि खारा॥
सहित सहाय रावनहि मारी।
आनउं इहां त्रिकूट उपारी।

हनुमानजी ने बार-बार सिंह-गर्जना करते हुए कहा, "मैं इस खारे समुद्र को खेल-खेल में ही लांघ सकता हूं। मैं रावण को उसके मददगारों सहित मार सकता हूं और मैं त्रिकूट पर्वत को भी उखाड़कर ला सकता हूं।

"लेकिन जामवंत, तुम बताओ कि मुझे क्या करना चाहिए। तुम मुझे उचित सलाह दो। जिस तरह की तुम सलाह दोगे, मैं वैसा ही काम करूंगा।"

एतना करहु तात तुम्ह जाई।
सीतहि देखि कहहु सुधि आई॥
तब निज भुज बल राजिव नैना।
कौतुक लागि संग कपि सैना॥

जामवंत ने कहा, "हे भाई! तुम तो केवल इतना ही करो कि सीताजी को देखकर उनकी खबर ला दो। श्रीराम अपनी भुजाओं के बल से रावण को मारकर अपने-आप ही सीता को लौटा लायंगे। वानरों की सेना को तो वह केवल खेल के लिए साथ लेंगे।"

जामवंत के बचन सुहाए।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए॥
तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई।
सहि दुख कंद मूल फल खाई॥

जब लगि आवौं सीतहि देखी ।
होइहि काज मोहि हरषि विशेषी ।।

जामवंत की सुंदर बात हनुमानजी के मन को बड़ी प्यारी लगी । उन्होंने कहा, "हे भाई ! तुम सब दुख सहकर, कंद, मूल फल खाकर उस समय तक मेरी बाट देखना जबतक मैं सीताजी को देखकर लौट न आऊं । काम जरूर होगा, क्योंकि मुझे इस समय बड़ा हर्ष हो रहा है ।"

इस तरह हनुमानजी अपने सारे साथियों को समुद्र के किनारे छोड़कर लंका की ओर चल दिये । समुद्र पार करते समय जहां कहीं भी पर्वत मिल जाता था, वहीं हनुमान कुछ देर विश्राम कर लेते थे। रास्ते में उनकी परीक्षा लेने के लिए देवताओं ने सर्पों की माता सुरसा को भेजा । उसने अपना मुंह फाड़कर हनुमान को खा जाना चाहा । परंतु वह भी कुछ कम नहीं थे । उन्होंने भी अपना विशाल रूप दिखलाया । सुरसा जितनी बढ़ती हनुमानजी उससे भी बढ़ जाते । अंत में उन्होंने छोटा रूप धारण कर लिया और उसके मुंह में प्रवेश करके बाहर आ गये । सुरसा समझ गई कि हनुमान बड़े बलशाली हैं । उसने हनुमानजी को आशीर्वाद दिया, "तुम श्रीराम का सब काम पूरा करोगे क्योंकि तुम बुद्धि और बल के भंडार हो ।"

: १६ :

भक्त विभीषण से भेंट

इसके बाद हनुमानजी को एक राक्षसी मिली । उसने भी उनका मार्ग रोकने की कोशिश की । हनुमानजी ने उसे तुरंत

मार डाला और समुद्र के पार पहुंच गये। वहां उन्होंने फल, फूलों से लदे वृक्षों को देखा। पशु-पक्षी मधुर शब्द कर रहे थे। हनुमानजी वहां एक पहाड़ी पर चढ़ गये। उन्होंने वहां से सारी लंका को देखा। समुद्र से घिरा बड़ा ऊंचा किला है। उसके सोने के परकोटे चमक रहे हैं। उसमें हीरे जड़े हैं। अंदर सुंदर मार्ग, बाजार और घर हैं, नगर सजा है। अपार सेना है। चारों ओर रौनक है, जिसका वर्णन नहीं हो सकता। नगर की रक्षा के लिए चारों ओर पहरेदार नियत हैं। यह सब देखकर हनुमानजी छोटा रूप बनाकर लंका की ओर चले। दरवाजे पर उनको लंकिनी नामकी एक राक्षसी मिली, जिसने उन्हें ललकारा। उन्होंने एक घूंसा मरकर उसे मार ड़ाला।

मंदिर मंदिर प्रति करि सोधा।
देखे जहं तहं अनगित जोधा॥
गयउ दसानन मंदिर माहीं।
अति विचित्र कहि जात सो नाहीं॥

हनुमानजी फिर आगे बढ़े। उन्होंने हरेक घर को देखना शुरू किया। वह रावण के महल की ओर भी गये। बड़ा विचित्र महल था वह! वर्णन नहीं किया जा सकता।

सयन किएं देखा कपि तेही।
मंदिर महुं न दीखि बैदेही॥
भवन एक पुनि दीख सुहावा।
हरिमंदिर तहं भिन्न बनावा॥

हनुमानजी ने उस महल में रावण को सोते हुए देखा। लेकिन सीताजी वहां कहीं दिखाई नहीं दीं। फिर उन्होंने एक

और महल देखा जो बहुत सुंदर था। वहां एक ओर अलग से भगवान का एक मंदिर बना हुआ था।

हनुमानजी उस भवन को देखकर अचम्भा करने लगे। लंका तो राक्षसों का निवास-स्थान है, यहां भगवान के भक्त का क्या काम ? वह इस प्रकार सोच ही रहे थे कि इतने में विभीषण जाग उठा।

राम राम तेहिं सुमिरन कीन्हा।
हृदय हरष कपि सज्जन चीन्हा ।।
एहि सन हठि करिहउं पहिचानी।
साधु ते होइ न कारज हानी ।।

उठते ही उसने राम-नाम का स्मरण किया। हनुमानजी ने उसे सज्जन मनुष्य समझा और वह मन में बहुत खुश हुए। उन्होंने सोचा कि इससे अवश्य ही पहचान करनी चाहिए, क्योंकि साधु आदमी से नुकसान नहीं होता, बल्कि लाभ ही होता है।

ऐसा सोचकर हनुमानजी ब्राह्मण के रूप में विभीषण से मिले। बड़े मीठे शब्दों में उन्होंने उससे बातें कीं। विभीषण ने उनको प्रणाम किया। उनकी कुशलता पूछी और वहां आने का कारण भी मालूम किया।

तब हनुमंत कही सब रामकथा निज नाम।
सुनत जुगल तन पुलक मन, मगन सुमिरि गुम ग्राम ।।

तब हनुमानजी ने श्रीराम की कथा कहकर अपना नाम बताया। उसे सुनते ही दोनों पुलक उठे, प्रेम और आनंद में मग्न हो गये। इसके बाद हनुमानजी से विभीषण ने अपनी सब दुख-कथा कह सुनाई। उसने उनको बताया कि मैं तो इस लंका में

इस तरह से रहता हूँ जैसे दांतों के बीच में जीभ रहती है।

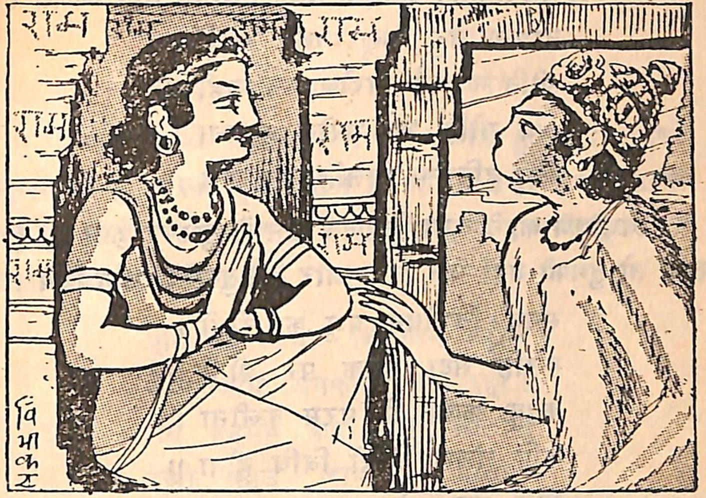

विभीषण ने हनुमान को प्रणाम किया।

फिर वह बड़ी विनम्रता से हनुमान से पूछने लगा कि क्या कभी भगवान राम मुझको अनाथ समझकर मेरे ऊपर कृपा करेंगे ?

सुनहु पवनसुत रहनि हमारी।
जिमि दसनन्हि महुं जीभ बिचारी॥
तात कबहुं मोहिं जानि अनाथा।
करिहहिं कृपा भानुकुल नाथा॥

विभीषण बहुत दुख मानते हुए कहने लगा कि मेरा शरीर तामसी है। मेरे पास किसी तरह के साधन भी नहीं हैं। मेरे हृदय के अंदर भगवान राम के कमलरूपी चरणों में प्रेम भी नहीं है।

परंतु हे हनुमान, अब मुझे उनके मिलने का भरोसा हो चला है क्योंकि बिना भगवान की कृपा के संतजन भी तो नहीं मिलते ।

तामस तनु कछु साधन नाहीं ।
प्रीति न पद सरोज मन माहीं ।।
अब मोहि भा भरोस हनुमंता ।
बिनु हरिकृपा मिलहिं नहिं संता ।।

विभीषण कहने लगा कि जब राम ने मुझपर कृपा की है तभी तो तुमको यहां भेज दिया और मैंने तुम्हारे दर्शन किये ।

सुनहु बिभीषन प्रभु कइ रीती ।
करहिं सदा सेवक पर प्रीती ।।
कहहु कवन मैं परम कुलीना ।
कपि चंचल सबही बिधि हीना ।।
प्रात लेइ जो नाम हमारा ।
तेहि दिन ताहि न मिलइ अहारा ।।

हनुमान ने प्रभु राम की महिमा का बखान करते हुए विभीषण को बताया कि राम सदा अपने सेवक से प्रेम करते हैं । अपने मन की व्यथा बताते हुए हनुमान ने कहा, "भला मैं ही कौन बड़ा कुलीन हूं । वानर तो सब तरह से चंचल और छोटा होता है । कोई प्रातःकाल हमारा नाम ले ले तो उसको उस दिन भोजन भी न मिले ।"

हनुमान ने विभीषण को बताया, "राम मुझपर जितनी कृपा करते हैं उसका मैं बखान नहीं कर सकता ।" राम के गुण-वर्णन करते हुए हनुमान के नेत्रों में प्रेम का जल भर आया । वह कहने लगे :

जानतहुं अस स्वामि बिसारी ।
फिरहिं ते काहे न होहिं दुखारी ।।
एहि विधि कहत राम गुन ग्रामा ।
पावा अनिर्बाच्य विश्रामा ।।

"जो राम की इस महिमा को जानते हुए भी उनको भुला देते हैं, उनको दुख क्यों न हो और वे इधर-उधर भटकते क्यों न फिरें ?" इस तरह से हनुमान ने राम के गुणों का बखान करके शांति पाई ।

पुनि सब कथा बिभीषन कही ।
जेहि विधि जनकसुता तहं रही ।।
तब हनुमंत कहा सुनु भ्राता ।
देखी चहउं जानकी माता ।।

फिर विभीषण ने हनुमानजी को बताया कि किस प्रकार सीताजी वहां रहती हैं । हनुमान ने इच्छा प्रकट की, "मैं सीताजी के दर्शन करना चाहता हूं ।"

जुगुति बिभीषन सकल सुनाई ।
चलेउ पवनसुत बिदा कराई ।।
करि सोइ रूप गयउ पुनि तहवां ।
बन असोक सीता रह जहवां ।।

यह सुनकर विभीषण ने हनुमानजी को सीताजी से मिलने का उपाय बताया । उसे जानकर हनुमानजी वहां से चल दिये और जहां सीताजी रहती थीं, अशोक-वाटिका के उसी भाग में पहुंच गये ।

: १७ :

रावण की धमकी

देखि मनहिं महुं कीन्ह प्रनामा ।
बैठेहि बीति जात निसि जामा ।।
कृस तनु सीस जटा एक बेनी ।
जपति हृदय रघुपति गुन श्रेनी ।।

सीताजी को देखकर हनुमान ने मन-ही-मन प्रणाम किया। उन्होंने देखा कि बैठे-ही-बैठे सीताजी की रात बीत जाती है। उनका शरीर दुबला हो गया है। सिर पर जटाओं की एक वेणी है। हृदय में श्री रामचंद्रजी के गुणों का जाप करती रहती हैं।

हनुमान एक पेड़ पर पत्तों की ओट में छिपकर बैठ गये और विचार करने लगे कि क्या किया जाय। उसी समय वहां रावण आ गया। उसके साथ बहुत-सी स्त्रियां भी थीं। उसने सीताजी को तरह-तरह से समझाना शुरू किया।

कह रावनु सुनु सुमुखि सयानी ।
मंदोदरी आदि सब रानी ।।
तव अनुचरी करउं पन मोरा ।
एक बार बिलोकु मम ओरा ।।

रावण ने सीताजी से कहा, "हे सुंदर मुखवाली, हे चतुर, सुनो। मंदोदरी आदि सब रानियों को मैं तुम्हारी दासी बना दूंगा, यह मेरी प्रतिज्ञा है। तुम एक बार मेरी ओर देखो तो।"

रावण की इन बातों को सुनकर सीताजी को बड़ा दुख हुआ। परंतु वह घबराईं ज़रा भी नहीं। उन्होंने हिम्मत और साहस से

काम लिया। अपने तप का उनको पूरा विश्वास था। उन्हें विश्वास था कि रावण उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

तृन धरि ओट कहति बैदेही।
सुमिरि अवधपति परम सनेही।।
सुनु दसमुख खद्योत प्रकासा।
कबहुं कि नलिनी करइ बिकासा।।
अस मन समुझु कहति जानकी।
खल सुधि नहिं रघुबीर बान की।।
सठ सूने हरि आनेहि मोही।
अधम निलज्ज लाज नहिं तोही।।

सीताजी ने तिनके की आड़ करके और श्रीराम का ध्यान करके रावण को फटकारकर कहा, "क्या पटबीजने की चमक से कभी कमलिनी खिल सकती है? तू अपने बारे में ऐसा ही समझ। क्या तुझे राम के बाणों का पता नहीं है। अरे पापी, तू मुझे सूनी कुटी में से हर लाया है। अरे अधम, निर्लज्ज, तुझे लज्जा नहीं आती?"

सीताजी की कठोर बातों को सुनकर रावण गुस्से में भर गया। उसने उन्हें मार डालने की धमकी दी और अपनी तलवार भी खींच ली।

सीता तैं मम कृत अपमाना।
कटिहउं तव सिर कठिन कृपाना।।
नाहिं त सपदि मानु मम बानी।
सुमुखि होती न त जीवन हानी।।

रावण ने कहा, "सीता तूने मेरा अपमान किया है, इसलिए

मैं तेरा सिर अपनी इस तेज तलवार से काटूंगा। नहीं तो तू जल्दी

रावण ने अपनी तलवार खींच ली

से मेरी बात मान ले, अन्यथा अब तेरा जीवन समाप्त होता है।"

स्याम सरोज दाम सम सुन्दर।
प्रभु भुज करि कर सम दसकंधर॥
सो भुज कंठ कि तव असि घोरा।
सुनु सठ अस प्रवान पन मोरा॥

सीता ने रावण की क्रोधभरी बातों का उत्तर देते हुए कहा, "हे रावण! या तो नील कमल की माला के समान सुंदर तथा हाथी की सूंड के समान भगवान राम की भुजा मेरे कंठ में पड़ेगी या तेरी भयानक तलवार। अरे दुष्ट, मैंने यही प्रतिज्ञा की है।"

सुनत वचन पुनि मारन धावा।
मय तनया कहि नीति बुझावा॥

कहेसि सकल निसिचरन्हि बोलाई।
सीतहि बहु विधि त्रासहु जाई॥

सीताजी की कठोर बातों को सुनकर रावण उन्हें मारने के लिए दौड़ा। लेकिन उसकी स्त्री मंदोदरी ने उसे समझाया। तब रावण ने सब राक्षसियों को बुलाकर कहा, "सीता को तरह-तरह से सताओ।" यह कह कर रावण चला गया और राक्षसियां सीताजी को भय दिखाने लगीं।

: १८ :

सीता को ढाढ़स

त्रिजटा नाम की एक स्त्री सीताजी की सदा रक्षा करती थी। उसने सीताजी को उस दिन भी बहुत धीरज बंधाया। दूसरी राक्षसियों को भी सीख दी। उस रात के सपने की उन्हें सारी बातें सुनाईं।

सपने बानर लंका जारी।
जातुधान सेना सब मारी॥
खर आरूढ़ नगन दससीसा।
मुंडित सिर खंडित भुज बीसा॥
एहि विधि सो दच्छिन दिसी जाई।
लंका मनहुं बिभीषन पाई॥

त्रिजटा कहने लगी, "मैंने ऐसा सपना देखा है कि एक बंदर ने सारी लंका को जला डाला है। उसने राक्षसों की सेना को भी मार डाला है। रावण नंगा होकर गधे पर सवार है। उसका सिर

मुंडा हुआ है और उसकी बीसों भुजाएं कट गई हैं। इस रूप में वह यमराज के घर चला गया और लंका को विभीषण ने पा लिया।"

स्वप्न की कथा सुनकर रावण की दासियां डरने लगीं और वे सब सीताजी की सेवा में लग गईं।

सीताजी का मन बहुत व्याकुल हो रहा था। उन्होंने त्रिजटा से कहा, "हे माता! अब श्रीराम का विरह मुझसे सहन नहीं किया जाता। अब मैं अपना शरीर ही त्याग देना चाहती हूं।"

आनि काठ रचु चिता बनाई।
मातु अनल पुनि देहि लगाई॥
सत्य करहि मम प्रीति सयानि।
सुनै को श्रवन सूल सम बानी॥

सीताजी त्रिजटा से कहने लगीं कि तुम लकड़ी लाकर मेरे लिए चिता बना दो और फिर उसमें आग लगा दो। अब राम के लिए मेरे हृदय में जो प्रेम है, उसे सत्य करना चाहती हूं। रावण की शूल के समान कठोर वाणी कौन सुने!

त्रिजटा ने सीताजी को फिर बार-बार समझाया। फिर वह अपने घर चली गई।

हनुमानजी सब देख-सुन रहे थे। सीताजी को व्याकुल देखकर उन्होंने पेड़ से रामचंद्रजी की दी अंगूठी डाल दी।

तब देखी मुद्रिका मनोहर।
राम नाम अंकित अति सुन्दर॥
चकित चितव मुदरी पहिचानी।
हरष विषाद हृदय अकुलानि॥

सीताजी ने उस सुंदर अंगूठी को देखा। उसपर राम-नाम

बड़े सुंदर ढंग से खुदा हुआ था। अंगूठी को पहचानकर सीताजी चकित होकर इधर-उधर देखने लगीं। उनके मन में हर्ष और दुख दोनों होने लगे।

सीताजी इस सोच में पड़ गईं कि यहां श्री रामचंद्रजी की अंगूठी कैसे आई। वह सोचने लगीं कि माया से तो यह बनाई नहीं जा सकती और श्रीराम को भी कोई जीत नहीं सकता। इतने में हनुमान पेड़ पर बैठे-बैठे ही श्री रामचंद्रजी के गुणों का बखान करने लगे। सीताजी के मन को उससे बड़ी शांति मिली। उन्होंने कहा, "जिसने श्रीराम की कथा कही है, वह प्रकट क्यों नहीं होता ?" तब हनुमानजी पेड़ से उतरकर सीताजी के सामने पहुंच गये। सीताजी उनको देखकर फिर सोच में पड़ गईं और मुंह फेरकर बैठ गईं, क्योंकि उन्हें यह मालूम नहीं था कि हनुमान रामचंद्रजी के सेवक हैं और उनकी खबर लेने आये हैं।

रामदूत मैं मातु जानकी।
सत्य सपथ करुनानिधान की॥
यह मुद्रिका मातु मैं आनि।
दीन्हि राम तुम्ह कहं सहिदानी॥

हनुमान ने कहा, "हे माता जानकीजी, मैं राम-दूत हूं। करुणा के सागर श्रीराम की सौगंध खाकर कहता हूं, माता, यह अंगूठी मैं लाया हूं। रामचंद्रजी ने मुझे यह अंगूठी आपकी पहचान के लिए दी है।"

इस तरह सीताजी को तसल्ली हुई। लेकिन उन्होंने फिर भी पूछा, "मनुष्य और वानर का साथ किस तरह हुआ ?"

हनुमानजी ने इसका उत्तर विस्तार के साथ देते हुए

भगवान राम के साथ मित्रता होने की सारी बातें बता दीं।

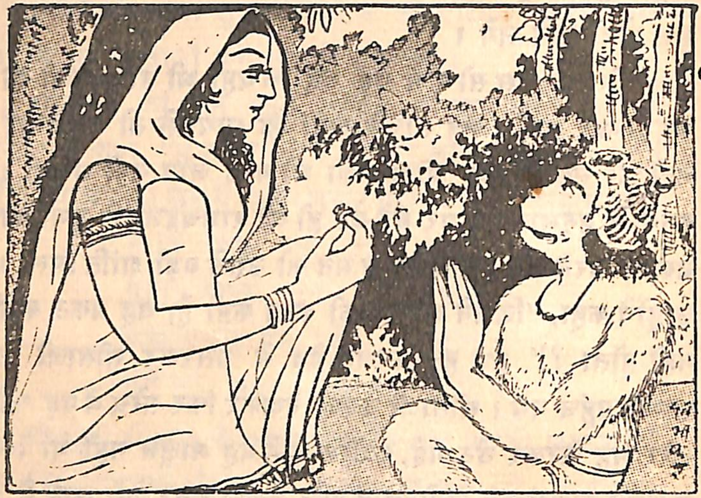

"श्री राम ने यह अंगूठी आपकी पहचान के लिए दी है"

कपि के बचन सप्रेम सुनि, उपजा मन बिस्वास
जाना मन क्रम बचन यह, कृपासिंधु कर दास
हरिजन जानि प्रीति अति गाढ़ी।
सजल नयन पुलकावलि बाढ़ी॥
बूड़त बिरह जलधि हनुमाना।
भयहु तात मो कहं जलजाना॥

अब तो सीताजी को विश्वास हो गया कि वह राम के दूत हैं। सीताजी ने उनको रामभक्त के रूप में देखकर अपने मन में बड़ा सुख माना। उस समय सीताजी की आंखों में प्रेम का जल भर आया। वह बोलीं, "मैं तो विरह-सागर में डूब रही थी, परंतु तुम

जहाज बनकर आ गये।" उन्होंने श्रीराम और लक्ष्मण की कुशलता पूछी। वह बोलीं, "सेवक को सुख देना जिनका स्वभाव है, वह रघुनाथजी मेरी याद भी करते हैं ?" सीताजी को व्याकुल देखकर हनुमानजी ने उनको सबका कुशल समाचार सुना दिया।

मातु कुसल प्रभु अनुज समेता।
तव दुख दुखी सुकृपा निकेता ॥
जनि जननी मानहु जियं ऊना।
तुम्ह ते प्रेमु राम के दूना ॥

हनुमानजी ने सीताजी को बताया कि राम अपने छोटे भाई लक्ष्मणसहित कुशलपूर्वक हैं। उन्होंने यह भी बताया कि कृपालु राम उनके दुख में सदा दुखी रहते हैं। अंत में उन्होंने तसल्ली देते हुए कहा, "माता, अपने मन में दुखी न होइये। श्रीराम के हृदय में आपसे भी दूना प्रेम है। वह वानरों सहित यहां आवेंगे और राक्षसों को मारकर आपको ले जावेंगे।"

भगवान राम और लक्ष्मण की कुशलता के समाचार से सीताजी का मन प्रसन्न हो उठा। गदगद् होकर उन्होंने हनुमानजी को अमरता का आशीर्वाद दिया।

हनुमान ने बार-बार सीताजी के चरणों में सिर नवाया और उनकी आज्ञा लेकर बाग में घुस गये। उन्हें भूख लग रही थी और वह फल खाना चाहते थे।

: १९ :

अशोक-वाटिका में युद्ध

सीताजी की आज्ञा पाकर हनुमानजी ने उन्हें सिर झुकाकर प्रणाम किया और बाग में घुस गये। वहां उन्होंने मीठे-मीठे

फल खाये और पेड़ उखाड़ फेंके। उन्होंने बहुत-से रखवालों को भी मार डाला। बचे-खुचे रखवालों ने भागकर रावण के दरबार में पुकार की। उन्होंने रावण को बताया कि वाटिका में एक बड़ा भारी वानर आया है। उसने अशोक-वाटिका को उजाड़ दिया है और बहुत-से रखवालों को पकड़-पकड़कर मसल-मसलकर मार डाला है।

सुनि रावन पठए भट नाना।
तिन्हहिं देखि गर्जेउ हनुमाना।।
सब रजनीचर कपि संघारे।
गये पुकारत कछु अधमारे।।

रावण ने रखवालों की बात सुनकर अपने बहुत-से योद्धाओं को बाग में भेजा। हनुमान उनको देखकर गर्जने लगे। उन्होंने बहुत-से राक्षसों को मार डाला। उनमें से कुछ, जो अधमरे-से थे, वे चिल्लाते हुए रावण के पास पहुंचे। जब रावण ने यह सुना कि वानर ने उसके बहुत-से रखवाले मार डाले तो उसने अपने पुत्र अक्षयकुमार को भेजा। वह असंख्य श्रेष्ठ योद्धाओं को लेकर चला। जब वह वाटिका में पहुंचा तो हनुमान ने पेड़ उखाड़कर उसे ललकारा और कुछ ही देर में उसको मार डाला। उसे मारकर वह बड़े जोर से गर्जे। फिर उन्होंने उसके साथ के बहुत-से योद्धा भी मार दिये। कुछ बचे हुए योद्धा भागकर फिर रावण के पास पहुंचे। उन्होंने रावण को अक्षयकुमार के मारे जाने का समाचार सुनाया और बताया कि वह वानर बहुत ही बलशाली है।

सुनि सुतबध लंकेस रिसाना।
पठएसि मेघनाद बलवाना।।

मारसि जनि सुत बांधेसु ताही ।
देखिअ कपिहिं कहां कर आही ।।

पुत्र के मरने की खबर सुनकर रावण क्रोध में भर उठा। इस बार उसने अपने बड़े पुत्र महाबलशाली मेघनाद को भेजा। रावण ने उससे कहा, "हे पुत्र! तू उसे मारना नहीं, बांधकर ले आना। देखना है कि वह वानर कहां से आया है।"

चला इन्द्रजित अतुलित जोधा ।
बंधु निधन सुनि उपजा क्रोधा ।।
कपि देखा दारुन भट आवा ।
कटकटाई गर्जा अरु धावा ।।
अति बिसाल तरु एक उपारा ।
बिरथ कीन्ह लंकेश कुमारा ।।
रहे महाभट ताके संगा ।
गहि गहि कपि मर्दइ निज अंगा ।।
तिन्हहि निपाति ताहि सन बाजा ।
भिरे जुगल मानहुं गज राजा ।।
मुठिका मारि चढ़ा तरु जाई ।
ताहि एक छन मुरछा आई ।।
उठि बहोरि कीन्हिसि बहु माया ।
जीति न जाइ प्रभंजन जाया ।।

रावण की आज्ञा पाकर मेघनाद हनुमानजी को पकड़ने के लिए चल दिया। भाई के मारे जाने से वह बहुत क्रुद्ध था। उसे आता देखकर हनुमान बहुत जोर से गर्जने लगे। वह समझ गये थे कि इस बार भयानक योद्धा आया है। उन्होंने एक बड़ा भारी पेड़

उखाड़ लिया और उसे इस तरह फेंका कि जिससे मेघनाद का रथ टूट गया और वह रथ के नीचे गिर गया। हनुमान ने उसके साथ के बहुत-से योद्धाओं को मसल-मसलकर मार डाला । वह फिर मेघनाद से लड़ने लगे। लड़ते समय वे दोनों ऐसे लगते थे जैसे दो श्रेष्ठ हाथी भिड़ गये हों । उन्होंने मेघनाद को एक जोर का घूंसा मारा और पेड़ पर जा चढ़े ।

मेघनाद क्षणभर के लिए संज्ञाहीन हो गया, लेकिन दूसरे ही क्षण उठकर उसने बहुत तरह की माया रची और हनुमानजी को पकड़ने की कोशिश की । परंतु वह उसके वश में नहीं आये ।

ब्रह्म अस्त्र तेहिं साधा कपि मन कीन्ह विचार ।
जौं न ब्रह्मसर मानऊं महिमा मिटइ अपार ।।

ऐसी दशा में अंत में उसने ब्रह्मास्त्र को संभाला और उसका प्रयोग किया ।

हनुमानजी अपने मन में सोचने लगे कि अगर मैं ब्रह्मास्त्र का आदर नहीं करता हूं तो उसकी महिमा घट जायगी । इसलिए इसके प्रयोग किये जाने पर वह शांत रहे ।

: २० :

रावण की सभा में

ब्रह्मबान कपि कहुं तेहिं मारा ।
परतिहुं बार कटकु संघारा ।।
तेहिं देखा कपि मुरुछित भयऊ ।
नाग पास बांधेसि लै गयऊ ।।

मेघनाद ने हनुमानजी के ब्रह्मबाण मारा। उसके लगते ही हनुमान पेड़ से नीचे गिर पड़े। गिरते समय उन्होंने मेघनाद की बहुत-सी सेना मार डाली। फिर वह मूर्छित हो गये। जब मेघनाद ने हनुमानजी को मूर्च्छित देखा तो उसने उन्हें नागपाश में बांध लिया। इसके बाद वह उन्हें रावण के दरबार में ले गया। रामदूत को कोई क्या बांध सकता था, परंतु प्रभु के काम के लिए हनुमानजी ने स्वयं अपने को बंधा लिया।

कपि बंधन सुनि निसिचर धाए।
कौतुक लागि सभा सब आए॥

जब हनुमानजी रावण की सभा में पहुंचे तो उनको देखने के लिए चारों ओर से बहुत-से राक्षस दौड़े आये। रावण भी हनुमानजी को देखकर हंसा। लेकिन फिर उसके हृदय में अपने पुत्र के मर जाने का दुख पैदा हुआ।

कह लंकेश कवन तैं कीसा।
केहिके बल घालेहि बन खीसा॥
की धौं श्रवन सुनेहि नहिं मोही।
देखउं अति असंक सठ तोही॥
मारे निसिचर केहिं अपराधा।
कहु सठ तोहि न प्रान कई बाधा॥

रावण ने हनुमानजी से पूछा, "हे वानर, तू कौन है? तूने किसके बल पर बाग को उजाड़ डाला? क्या तूने अपने कान से मेरा नाम और यश नहीं सुना। हे मूर्ख! मैं देखता हूं कि तू बड़ा ही निडर है।"

रावण ने हनुमानजी से यह भी पूछा, "तूने राक्षसों को किस कारण मार डाला ? क्या तुझे अपने प्राणों की चिंता नहीं ?"

घरइ जो विविध देह सुरत्राता ।
तुम्ह से सठन्ह सिखावनु दाता ।।

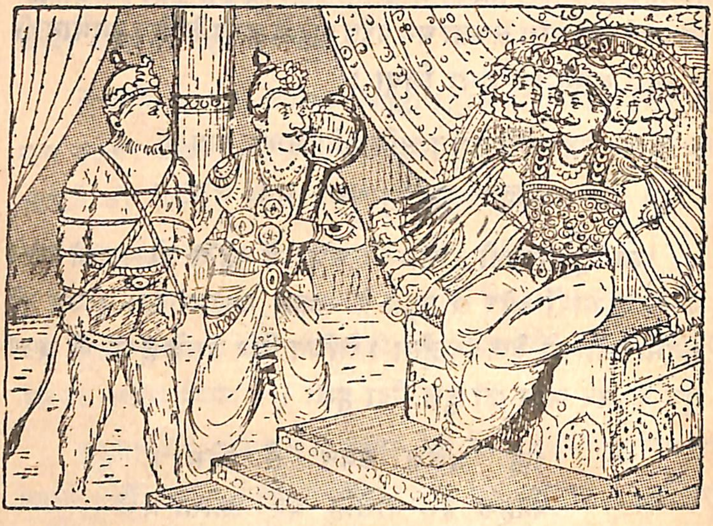

रावण की सभा में

हर को दण्ड कठिन जेहि भंजा ।
तेहि समेत नृपदल मद गंजा ।।
खर दूषन त्रिसिरा अरु बाली ।
बधे सकल अतुलित बलसाली ।।
जाके बल लवलेस तें, जितेहु चराचर जारि ।
तासु दूत मैं जा करि, हरि आनेहु प्रिय नारि ।।

हनुमानजी ने श्रीराम के यश का बखान करते हुए कहा, "जो देवताओं की रक्षा के लिए बार-बार जन्म लेते हैं, जो तुम्हारे

जैसे मूर्खों को शिक्षा देनेवाले हैं, जिन्होंने शिवजी के कठोर धनुष को तोड़ डाला, और उसीके साथ राजाओं का गर्व चूर कर दिया है, जिन्होंने खर, दूषण, त्रिशिर और बाली को मार डाला, जिनके तनिक से बल से तुमने चराचर जगत्त को जीत लिया और जिनकी पत्नी को तुम छल से हरकर ले आये हो, मैं उन्हीं भगवान राम का दूत हूं।"

जानउं मैं तुम्हारि प्रभुताई।
सहस्रबाहु सन परी लराई॥
समर बालि सन करि जसु पावा।
सुनि कपि बचन बिहंसि बहरावा॥

"मैं तुम्हारे बल को जानता हूं। मुझे मालूम है कि तुम्हारी सहस्रबाहु से लड़ाई हुई थी। तुमने बाली के साथ लड़कर क्या यश पाया था ?"

रावण हनुमानजी की इस प्रकार की बातों को सुनकर हँस दिया। उसने हनुमान को किसी तरह का उत्तर नहीं दिया। हनुमान फिर कहने लगे—

खायेउं फल प्रभु लागी भूखा।
कपि सुभाव तें तोरेउं रूखा॥
सबके देह परम प्रिय स्वामी।
मारहिं मोहिं कुमारग गामी॥
जिन्ह मोहि मारा तें मैं मारे।
तेहि पर बांधेउं तनयं तुम्हारे॥
मोहिं न कछु बांधे कर लाजा।
कीन्ह चहऊं निज प्रभु कर काजा॥

"राजन् ! मुझे भूख लगी थी। मैंने अपनी भूख मिटाने के लिए फलों को खा लिया। वानर-स्वभाव के कारण मैंने बाग के पेड़ों को तोड़ दिया। हे राक्षसों के राजा, सबको अपना शरीर प्यारा होता है। कुमार्ग पर चलनेवाले राक्षस जब मुझे मारने लगे तो मैंने भी उनको मारा। मैंने केवल उनको ही मारा, जिन्होंने मुझे मारा था। इतना होते हुए भी तुम्हारा पुत्र मेघनाद मुझे बांधकर यहां पकड़ लाया है। मुझे अपने बांधे जाने में किसी प्रकार की लज्जा नहीं है, मैं तो अपने स्वामी का कार्य करना चाहता हूं।"

बिनती करउं जोरि कर रावन।
सुनहु मान तजि मोर सिखावन ॥
देखहु तुम निज कुलहि बिचारी।
भ्रम तजि भजहु भगत भयहारी ॥
जाके डर अति काल डराई।
जो सुर असुर चराचर खाई ॥
तासों बयरु कबहुं नहिं कीजै।
मोरे कहें जानकी दीजै ॥

"हे रावण, मैं हाथ जोड़कर विनती करता हूं। तुम घमंड को छोड़कर मेरी बात सुनो। तुम अपने पवित्र कुल का विचार करके देखो। तुम भ्रम को छोड़कर भक्तों के भय को मिटानेवाले श्रीराम का भजन करो। जिसके डर से काल भी डरता है, जो देवता, राक्षस और सारे चराचर को नष्ट कर देनेवाले हैं, उनसे तुम किसी प्रकार का वैर मत करो। मेरा कहना मानकर तुम सीताजी को वापस लौटा दो।"

हनुमानजी ने रावण से यह भी कहा, "भगवान राम की यदि तुम शरण में जाओगे तो वह करुणा-सागर श्रीराम तुम्हारे सारे अपराध क्षमा करके तुमको अपनी शरण में ले लेंगे। राम शरणागत की रक्षा करते हैं। वह करुणा के सागर हैं।"

हनुमान ने रावण को राजनीति की बात समझाते हुए बताया कि अब उसकी इसी में भलाई है कि वह रामचंद्रजी का प्रिय बन जाय। हनुमान कहने लगे—

रामचरन पंकज उर धरहू।
लंका अचल राजु तुम्ह करहू।।
रिषि पुलस्ति जनु बिमल मयंका।
तेहि ससि संहु जनि होंहु कलंका।।

"तुम रामचंद्रजी के चरणकमलों को हृदय में धारण करो और लंका का अचल राज्य करो। तुम पुलस्त्य ऋषि के चंद्रमा के समान उज्ज्वल यश में कलंक मत बनो।"

राम नाम विनु गिरा न सोहा।
देख बिचारि त्यागि मद मोहा।।
राम बिमुख संपति प्रभुताई।
जाइ रही पाई बिनु पाई।।

हनुमान ने कहा, "सुन रावण! राम-नाम के बिना वाणी की शोभा कोई नहीं। इस बात को तुम मद और मोह छोड़कर देखो। जो व्यक्ति राम से विमुख होता है, उसकी संपत्ति और उसका बड़प्पन सब जाता रहता है। उनका पाना-न-पाना दोनों बराबर है।"

इस प्रकार विनम्र भाव से समझाने के बाद हनुमान ने रावण

को भय दिखाते हुए कहा—

सुनु दसकंठ कहउं पन रोपी।
बिमुख राम त्राता नहिं कोपी॥

"हे रावण, सुनो। मैं प्रतिज्ञा करके कहता हूं कि श्रीराम के विरुद्ध होनेवाले की कोई भी रक्षा नहीं कर सकता।"

यह सब होने पर भी हनुमान की बातों का रावण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वह तो अपने राजमद में चूर हो रहा था। वह राम के महाबली, पराक्रमी और तेजस्वी होने की बात सुनकर तनिक भी भयभीत न हुआ।

बोला बिहंसि महा अभिमानी।
मिला हमहिं कपि गुर बड़ ग्यानी॥
मृत्यु निकट आई खल ताही।
लागेहि अधम सिखावन मोही॥

महाघंमडी रावण हँसकर कहने लगा, "हमें यह बंदर बड़ा ज्ञानी गुरु मिला है। अरे दुष्ट, मालूम पड़ता है कि तेरी मौत निकट आ गई है। अधम, तू मुझे शिक्षा देने चला है।"

उलटा होइहि कहा हनुमाना।
मतिभ्रम तोरि प्रगट मैं जाना॥

रावण की इस तरह की बातों को सुनकर हनुमान ने कहा, "इसका उलटा ही होगा। मृत्यु मेरी नहीं तेरी आई है। इसीलिए तेरी बुद्धि में भ्रम पैदा हो गया है।"

यह सुनकर रावण और भी क्रुद्ध हो उठा। जिस समय रावण और हनुमान की यह बातें हो रही थीं, उसी समय वहां रावण का भाई विभीषण आ गया। रावण उस समय अपने योद्धाओं से कह

रहा था कि इस वानर को मार डालो ।

रावण के योद्धा अपने स्वामी की आज्ञा सुनते ही हनुमान को मारने के लिए आगे बढ़े ।

नाइ सीस करि विनय बहूता ।
नीति विरोध न मारिअ दूता ।।
आन दण्ड कछु करेअ गोसाईं ।
सबही कहा मंत्र भल भाई ।।

विभीषण ने सबकुछ सुनकर अपने भाई रावण को नीति की बातें समझाते हुए कहा, "इसको मारना नहीं चाहिए, बल्कि इसे कोई और दंड दिया जाय ।" वहांपर जो और सभासद थे, उन्होंने भी विभीषण की बात को ठीक बताया । सबकी यही सलाह हुई कि वानर को मारा न जाय ।

इसपर रावण ने हँसकर कहा, "अच्छा तो इसके अंग-भंग कर देने चाहिए । बिना किसी दंड के इसका चला जाना ठीक नहीं ।"

कपि कें ममता पूंछ पर, सबहिं कहउं समुझाइ ।
तेल बोरि पट बांधि पुनि, पावक देहु लगाइ ।।

"वानर को अपनी पूंछ बहुत प्यारी होती है । इसलिए इसकी पूंछ पर तेल में कपड़ा डुबोकर बांधो और फिर उसमें आग लगा दो ।"

पूंछहीन बानर तहं जाइहि ।
तब सठ निज नाथहिं लै आइहि ।।
जिन्ह कै कीन्हिसि बहुत बड़ाई ।
देखउं मैं तिन्ह कै प्रभुताई ।।

रावण कहने लगा, "जब बिना पूंछ का यह वानर अपने

स्वामी के पास जायगा तब यह मूर्ख अपने स्वामी को यहां ले आवेगा। जिसकी इसने इतनी अधिक बड़ाई की है, मैं भी तो उसके बड़प्पन को देख लूं।"

: २१ :

लंका-दहन

बचन सुनत कपि मन मुसुकाना।
भइ सहाय सारद मैं जाना॥

रावण की बात सुनकर हनुमानजी मन-ही-मन मुसकाये। वह सोचने लगे कि सरस्वती ने उनकी रक्षा की, जो रावण के मुख से इस तरह की बात निकली।

जातु धानु सुनि रावन बचना।
लागे रचै मूढ़ सोइ रचना॥

इधर रावण के आदेश को सुनकर लंका के रहनेवाले हनुमानजी की पूंछ में आग लगाने की तैयारी करने लगे। वे बहुत-सा कपड़ा और तेल ले आये और हनुमान की पूंछ पर लपेटना आरंभ कर दिया। लपेटते-लपेटते लंका में कपड़ा, तेल और घी नहीं रहा, क्योंकि हनुमानजी ने खेल-ही-खेल में पूंछ बहुत बढ़ा ली। लंका के रहनेवाले तमाशा देखने के लिए इकट्ठे हो गये। उनमें से कोई हनुमानजी के लात मारने लगा और कोई उनकी हँसी करने लगा।

रहा न नगर बसन घृत तेला।
बाढ़ी पूंछ कीन्ह कपि खेला॥

कौतुक कहं आये पुरबासी।
मारहिं चरन करहिं बहु हांसी॥

वह एक महल से दौड़कर दूसरे पर जाने लगे।

वे ढोल बजाने लगे और तालियां पीटने लगे। उन्होंने हनुमानजी कोसारे नगर में घुमाया। इसके बाद उन्होंने उनकी पूंछ में आग लगा दी। जब हनुमान ने देखा कि पूंछ में आग लग गई है तो वह छोटे आकारवाले बन गये। वह उन सबके बंधन से छुटकारा पाकर सोने की अटारियों पर चढ़ गये। उनको देखकर राक्षसों की स्त्रियां डरने लगीं। जिस समय हनुमानजी की पूंछ में आग लगी उसी समय तेज हवा चलने लगी। वह एक महल से दौड़कर दूसरे पर जाने लगे। आग की तेज लपटें नगर में चारों ओर फैल गईं जिससे नगरवासियों का सामान भी जलने लगा।

तात मातु हा सुनिअ पुकारा ।
एहिं अवसर को हमहि उबारा ॥
हम जो कहा यह कपि नहिं होई ।
बानर रूप धरें सुर कोई ॥

नगरवासी हाहाकार करते हुए कहने लगे, "हाय बाप, हाय मैया ! इस समय हमें कौन बचायेगा और कौन हमारी पुकार सुनेगा ? हमने तो पहले ही कहा था कि यह वानर नहीं है, बल्कि वानर का रूप बनाये हुए कोई देवता है ।"

जारा नगर निमिष एक माहीं ।
एक बिभीषन कर गृह नाहीं ॥

इस तरह बहुत थोड़े समय में ही सारा नगर जलकर राख हो गया, परंतु विभीषण का घर जलने से बच गया । हनुमान ने उलट-पलटकर सारी लंका जला दी । इसके बाद वह समुद्र में कूद पड़े । वहां उन्होंने अपनी पूंछ की आग को बुझाया ।

पूंछ बुझाई खोइ श्रम, धरि लघु रूप बहोरि ।
जनक सुता के आगें, ठाढ़ भयउ कर जोरी ॥

हनुमान अपनी पूंछ को बुझाकर, थकावट को दूर करके और फिर छोटा-सा रूप बनाकर सीताजी के पास गये । वह उनके आगे हाथ जोड़कर खड़े हो गये ।

मातु मोहि दीजे कछु चीन्हा ।
जैसे रघुनायक मोहि दीन्हा ॥
चूड़ामनि उतार तब दयऊ ।
हरष समेत पवन सुत लयऊ ॥

हनुमानजी ने सीताजी से प्रार्थना की, "माता, मुझे आप अपना कोई ऐसा चिह्न दीजिये जैसा रामचंद्रजी ने मुझे दिया था।"

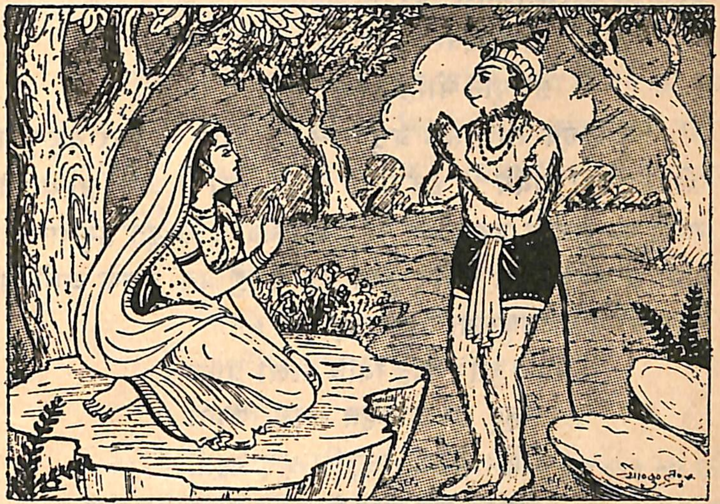

वह सीताजी के सामने हाथ जोड़कर खड़े हो गये

इतना सुनकर सीताजी ने हनुमानजी को अपनी चूड़ामणि उतार दी। हनुमान ने उसे बड़े हर्ष के साथ ले लिया।

कहेहु तात अस मोर प्रनामा।
सब प्रकार प्रभु पूरन कामा॥
दीन-दयालु बिरिदु संभारी।
हरहु नाथ मम संकट भारी॥

सीताजी ने कहा, "हे हनुमान, तुम श्री रामचंद्रजी से मेरा प्रणाम कहना, और उनसे यह भी कहना कि आप दीनों पर दया

करनेवाले हैं। आप मेरे दुखों को दूर कीजिये। राम के बाणों में अपार शक्ति है। हे हनुमान, तुम उनको उनके बाणों की शक्ति याद करा देना।"

इतना कहकर सीताजी बहुत अधीर हो उठीं तथा उन्होंने बहुत ही निराशाजनक स्वर में कहा—

मास दिवस महुं नाथु न आवा।
तौ पुनि मोहि जिअत नहिं पावा॥

"यदि एक मास तक प्रभु राम नहीं आये तो फिर वह मुझे जीवित नहीं पायेंगे।" इन शब्दों में सीताजी ने अपने हृदय की सारी व्याकुलता प्रकट कर दी। रामचंद्रजी के दूत हनुमान के आने से उन्हें बहुत संतोष हुआ था, परंतु अब उसके जाने से सीताजी की व्याकुलता बहुत बढ़ गई।

कहु कपि केहि बिधि राखौं प्राना।
तुम्हहू तात कहत अब जाना॥
तोहि देखि सीतलि भइ छाती।
पुनि मो कहुं सोइ दिनु सो राती॥

सीताजी व्याकुल मन होकर कहने लगीं, "हे हनुमान, कहो, मैं किस तरह जीवित रहूं। हे तात, तुम भी अब जाने को कह रहे हो। तुमको देखकर मेरी छाती ठंडी हुई थी, परंतु मेरे लिए फिर वही दिन और वही रात।"

हनुमानजी ने सीताजी को सब तरह से धीरज बंधाया। उन्होंने सीताजी के चरणकमलों में सिर नवाकर रामचंद्रजी की सेवा में पहुंचने की बात कही। सीताजी उन्हें देर तक नहीं रोक सकती थीं। उनका वापस जाना भी अत्यंत आवश्यक था।

सो हनुमान वहां से चल दिये। लंका से चलते समय उन्होंने घोर गर्जना की।

: २२ :

हनुमान की वापसी

हनुमान की शक्ति के कारण सारी लंका में भय छा गया। उनके लंका जलाने के कारण किसी में यह शक्ति नहीं रही कि वह उनको पकड़ने का साहस करे। उनकी गर्जना सुनकर नर और नारी जहां-तहां छिप गये।

नाघि सिंधु एहि पारहि आवा।
सबद किलकिला कपिन्ह सुनावा॥
हरषे सब बिलोकि हनुमाना।
नूतन जन्म कपिन्ह तब जाना॥

लंका से चलकर हनुमान समुद्र को लांघकर इस पार आ गये। उन्होंने वानरों को अपने आने की सूचना किलकारी मारकर दी। हनुमान को देखकर सारे वानर बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने उस समय अपना नया जन्म हुआ समझा; क्योंकि वे समझ रहे थे कि यदि सीता का पता न चला और हनुमान लौटकर न आये तो सुग्रीव उन्हें जीवित न छोड़ेगा।

मुख प्रसन्न तन तेज बिराजा।
कीन्हेसि रामचन्द्र कर काजा॥
मिले सकल अति भये सुखारी।
तलफत मीन पाव जिमि वारी॥

हनुमान का मुख बड़ा प्रसन्न था। उनके शरीर पर एक तरह का तेज दिखाई पड़ रहा था। इस सबको देखकर वानरों ने समझ लिया कि हनुमान ने रामचंद्रजी का काम पूरा कर दिया है। सारे वानर हनुमान से मिले और वे बड़े सुखी हुए। जैसे तड़पती हुई मछली को पानी मिल जाता है ऐसे ही वानरों को हनुमान मिल गये।

इसके बाद वे सब रामचंद्रजी के पास चले। रास्ते में वे हनुमान से तरह-तरह की बातें पूछते थे। इस तरह चलते-चलते वे मधुबन में पहुंच गये।

तब मधुबन भीतर सब आए।
अंगद संमत मधुफल खाए॥
रखवारे जब बरजन लागे।
मुष्ठि प्रहार हनत सब भागे॥

सारे वानर मधुबन के भीतर घुस गये। उन्होंने अंगद के कहने से मीठे-मीठे फल खाये। जब रखवालों ने इनको ऐसा करने से रोका तो उन्होंने रखवालों के घूंसे मारे। मार पड़ने पर वे सब रखवाले भाग गये।

जाइ पुकारे ते सब, बन उज्जर युवराज।
सुनि सुग्रीव हरष कपि, करि आए प्रभु काज॥

रखवालों ने बाग उजाड़ने की खबर सुग्रीव को दी। उन्होंने यह भी बताया कि युवराज अंगद सारा बाग उजाड़ रहे हैं। सुग्रीव उनकी बात सुनकर नाराज नहीं हुआ बल्कि बड़ा प्रसन्न हुआ।

जौं न होति सीता सुधि पाई।
मधुबन के फल सकहिं कि खाई॥

एहि विधि मन बिचारि कर राजा ।
आइ गएं कपि सहित समाजा ।।

उसने समझ लिया कि हनुमान, अंगद और वानर श्रीराम का कार्य बना लाये हैं। अगर उन्होंने सीता का पता न लगाया होता तो वे मधुबन में आकर इस तरह शरारत नहीं कर सकते थे और न वहां फल खा सकते थे। इधर सुग्रीव यह सोच ही रहे थे कि इतने में वानर-सेना भी वहां आ गई।

आइ सबन्हि नावा पद सीसा ।
मिलेउ सबन्हि अति प्रेम कपीसा ।।
पूंछी कुसल कुसल पद देखी ।
राम कृपा भा काजु बिसेषी ।।

सारे वानरों ने सुग्रीव के पास आकर उसके चरणों में अपना सिर झुकाया। सुग्रीव उन सबसे बड़े प्रेम के साथ मिले। उन्होंने वानर-सेना से कुशलता पूछी। वानरों ने सुग्रीव को उत्तर देते हुए कहा, "आपके चरणों के दर्शन से सब कुशल है। श्रीराम की कृपा से काम बड़ी सफलता के साथ पूरा हुआ है।"

नाथ काजु कीन्हिउ हनुमाना ।
राखे सकल कपिन्ह के प्राना ।।
सुनि सुग्रीव बहुरि तेहि मिलेऊ ।
कपिन्ह सहित रघुपति पहिं चलेऊ ।।

वानर कहने लगे, "हे स्वामी, हनुमान ने ही सारा कार्य पूर्ण किया है। उन्होंने सारे वानरों की जान बचा ली।" वानरों की यह बात सुनकर सुग्रीव हनुमान से दुबारा मिले। इसके बाद वे सारे वानरों को साथ लेकर रामचंद्रजी की सेवा में चले गए।

राम कपिन्ह जब आवत देखा ।
किएं काजु मन हरष बिसेषा ।।
फटिकसिला बैठे द्वौ भाई ।
परे सकल कपि चरनन्हि जाई ।।

जब रामचंद्रजी ने वानरों को उनका काम करके आते हुए देखा तो उनके मन को बड़ी खुशी हुई । उस समम दोनों भाई एक श्वेत शिला पर बैठे हुए थे । वानर वहां पहुंचे और राम के चरणों में प्रणाम किया ।

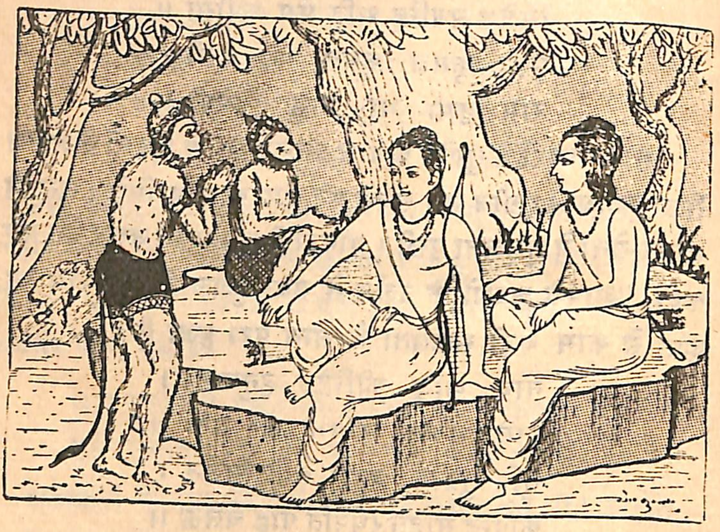

वानरों ने राम को प्रणाम किया

प्रीति सहित सब भेंटे, रघुपति करुना पुंज ।
पूंछी कुसल नाथ अब, कुसल देखि पद कुंज ।।

श्रीराम ने उन सबसे बड़े प्रेम के साथ भेंट की । सारे

वानर बड़े प्रसन्न थे। श्रीरामचंद्रजी ने उनसे कुशलता पूछी। उन्होंने कहा, "नाथ, आपके चरण कमलों के दर्शन से सब तरह की कुशलता है।"

जामवन्त कह सुनु रघुराया।
जापर नाथ करहु तुम्ह दाया॥
ताहि सदा सुभ कुसल निरन्तर।
सुर नर मुनि प्रसन्नता ऊपर॥

जामवंत ने रामचंद्रजी से कहा, "हे रघुनाथजी, सुनिये। जिसपर आपकी कृपा होती है, उसका सदा कल्याण होता है और वह हमेशा कुशलता से रहता है। देवता, मनुष्य और मुनि लोग तक उससे प्रसन्न रहते हैं।"

प्रभु की कृपा भयउ सबु काजू।
जन्म हमार सुफल भा आजू॥
नाथ पवनसुत कीन्ह जो करनी।
सहसहुं मुख न जाइ सो बरनी॥

जामवंत कहने लगे, "प्रभु की कृपा से सब काम हो गया। आज हमारा जन्म सफल हो गया। हे नाथ, हनुमानजी ने जो काम किया है वह हजार मुखों से भी बयान नहीं किया जा सकता।"

सुनत कृपानिधि मन अति भाए।
पुनि हनुमान हरषि हियं लाए॥
कहहु तात केहि भांति जानकी।
रहति करति रक्षा स्व प्रान की॥

जामवंत की बात सुनकर कृपा के सागर श्रीराम मन में

बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने प्रसन्न होकर हनुमान को फिर से गले लगा लिया। उन्होंने हनुमान से पूछा, "हे तात, कहो सीता किस तरह से रहती हैं और किस तरह से अपने प्राणों की रक्षा करती हैं।"

: २३ :

सीता की दशा का वर्णन

नाम पाहरू दिवस निसि, ध्यान तुम्हार कपाट।
लोचन निज पद जंत्रित, जाहिं प्रान केहिं बाट ॥

हनुमान ने कहा, "आपका नाम रात-दिन सीताजी का पहरा देनेवाला है। आपका ध्यान ही किवाड़ों के समान है। सीताजी अपनी आंखें अपने पैरों की ओर लगाये रहती हैं, जो एक तरह से ताले का काम करती हैं। ऐसी दशा में प्राण जायं तो किस रास्ते से जायं ?"

चलति मोहि चूड़ामनि दीन्ही।
रघुपति हृदयं लाइ सोइ लीन्ही ॥
नाथ जुगल लोचन भरि बारी।
बचन कहे कछु जनक कुमारी ॥

हनुमानजी बोले, "जब मैं चलने लगा तो उन्होंने मुझे चूड़ामणि उतारकर दी।" श्रीराम ने हनुमान से चूड़ामणि ले ली। और उसे अपने हृदय से लगा लिया।

हनुमानजी ने आगे कहा, "हे नाथ, दोनों आंखों में जल भरकर जानकीजी ने मुझसे कुछ बातें कहीं थीं।"

राम सीताजी के संबंध में सारी बातें सुनने के लिए स्वयं उतावले थे। बहुत समय के पश्चात उनको सीताजी का समाचार मिला था, इसलिए उन्होंने हनुमान से कहा, "तुम सीताजी की सभी बातों को मुझसे कहो।"

हनुमान ने उन बातों को विस्तार के साथ बताया, जो सीता ने हनुमान से अशोक-वाटिका से चलते समय कही थीं। सीताजी उस समय राम से मिलने के लिए बड़ी व्याकुल थीं। उन्होंने राम और लक्ष्मण दोनों के प्रति बड़ा आदर प्रकट किया। सीताजी चाहती थीं कि राम जल्दी-से-जल्दी आकर उन्हें वहां से ले जायं। वह रावण के बंधन में एक क्षण भी रहना नहीं चाहती थीं। हनुमान ने सीताजी की विपत्ति का वर्णन करते हुए कहा—

अनुज समेत गहेहु प्रभु चरना।
दीनबन्धु प्रन तारति हरना॥
मन क्रम बचन चरन अनुरागी।
केहि अपराध नाथ हौ त्यागी॥

"माता सीता ने कहा, छोटे भाई समेत प्रभु राम के पैर पकड़ना और उनसे यह कहना कि आप दीनबंधु हैं, आप शरण में आये हुए के दुखों को दूर करनेवाले हैं। सीता मन, वचन, और कर्म से आपके चरणों के पीछे चलनेवाली है। फिर आपने किस अपराध में उसे भुला दिया है।"

अवगुन एक मोर मैं माना।
बिछुरत प्रान न कीन्ह पयाना॥

हनुमानजी कहने लगे कि सीताजी ने बड़े दुःख के साथ यह भी कहा था, "मैं अपना एक कसूर जरूर मानती हूं कि प्रभु राम

से अलग होते ही मैंने अपने प्राण क्यों नहीं त्याग दिये !"

सीता कै अति विपति बिसाला।
बिनहिं कहें भलि दीन दयाला॥

सीताजी के अपार दुःख को प्रकट करते हुए हनुमान कहने लगे, "हे प्रभु ! सीताजी की महान विपत्ति को आपके सामने न कहना ही अच्छा है।"

इस तरह हनुमान ने सीताजी की सारी दुःख-कथा कह सुनाई। उन्होंने बताया कि जानकीजी का एक-एक पल कल्प की तरह से बीतता है। इसलिए प्रभु आप जल्दी से लंका की ओर चलिये। वहां पहुंचकर राक्षसों को जीतकर सीताजी को ले आइये।

सुनि सीतादुख प्रभु सुख अयना।
भरि आये जल राजिव नयना॥

हनुमान से सीताजी की दुखभरी कथा को सुनकर सुख के धाम श्रीराम की कमल जैसी आंखों में पानी भर आया।

कुछ देर और सीताजी के बारे में बातें होती रहीं। रामचंद्रजी इस बात से बड़े प्रसन्न थे कि उनके भक्त हनुमान ने उन्हें सीताजी का ठीक प्रकार से समाचार लाकर दिया है। वह हनुमान की बार-बार बड़ाई करने लगे।

सुनु कपि तोहि समान उपकारी।
नहिं कोउ सुर नर मुनि तनु धारी॥
प्रति उपकार करौं का तोरा।
सन्मुख होइ न सकत मन मोरा।
सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं।
देखेउं करि विचार मन माहीं॥

श्रीराम कहने लगे, "हे हनुमान सुन, तेरे बराबर मेरी भलाई करनेवाला कोई भी शरीरधारी देवता, मनुष्य या मुनि नहीं है। मैं बदले में तेरा क्या उपकार करूं। हे पुत्र सुन, मैंने अपने मन में भली प्रकार विचार कर देख लिया है कि मैं तेरी भलाई का बदला नहीं चुका सकता।"

जब हनुमानजी ने श्रीराम के मुंह से इस तरह की बातें सुनीं तो उनका मन प्रेम से भर आया। वह बार-बार श्रीराम के चरणों में गिरे।

कपि उठाइ प्रभु हृदय लगावा।
कर गहि परम निकट बैठावा ॥
कह कपि रावन पालित लंका।
केहि विधि दहेउ दुर्ग अति बंका ॥

रामचंद्रजी ने भी हनुमान को उठाकर अपनी छाती से लगाया और उनका हाथ पकड़कर अपने पास बिठा लिया। राम हनुमान से लंका की बात पूछने लगे। उन्होंने कहा, "हे हनुमान, मुझे यह भी तो बतलाओ कि तुमने लंका के बड़े विशाल किले को, जिसकी रक्षा रावण करता है, किस तरह से जलाया ?"

प्रभु प्रसन्न जाना हनुमाना।
बोला बचन विगत अभिमाना ॥

हनुमान ने समझ लिया कि प्रभु राम उनसे अत्यंत प्रसन्न हैं। उन्होंने अभिमान को छोड़कर लंका जलाने का सारा समाचार बताना प्रारंभ कर दिया।

साखामृग कै बड़ि मनसाई।
साखा ते साखा पर जाई ॥

नाघि सिंधु हाटकपुर जारा।
निसिचर गन बधि बिपिन उजारा ।।

हनुमान कहने लगे, "प्रभो, वानर का यह काम है कि वह वृक्ष की एक डाल से दूसरी डाल पर चला जाता है। पहले मैंने समुद्र को लांघा। इसके बाद मैंने सोने की लंका को जलाया। मैंने वहां के राक्षसों को भी मार डाला और वहां के अशोकवन को भी उजाड़ डाला।"

राम हनुमान की वीरता की बातों को बड़े ध्यान से सुनते रहे। उनके हृदय में हनुमान के प्रति पहले ही बहुत प्रेम था, परंतु लंका फूंकने और सीताजी के कुशल समाचार लाने से राम हनुमान से और अधिक प्रसन्न हुए।

हनुमान के हृदय में भी श्रीराम के प्रति अगाध भक्ति और प्रेम था। हनुमान समझते थे कि प्रभु राम के भरोसे पर ही वह इतना काम कर पाये। उन्होंने राम से कहा—

सो सब तव प्रताप रघुराई।
नाथ न कछु मोरि प्रभुताई ।।

"हे रघुनाथजी, यह सब आपके प्रताप से ही हुआ है। हे नाथ ! इस काम में मेरी बड़ाई कुछ भी नहीं है।"

अपनी दीनता और विनम्रता प्रकट करते हुए हनुमान ने श्रीराम की बड़ी प्रशंसा की। वह कहने लगे, "जिसपर आपकी कृपा होती है, उसके लिए कोई भी काम कठिन नहीं है। केवल आपका अनुकूल होना आवश्यक है।"

: २४ :

लंका की ओर

इधर राम और हनुमान परस्पर बातें कर रहे थे, उधर वानर-सेना इस बात पर हर्ष मना रही थी कि सीताजी का पता चल गया। वानर आनंदकंद भगवान राम का जय-जयकार करने लगे। उन्हें इस बात की प्रसन्नता थी कि हनुमान भगवान राम के काम आये।

तब रघुपति कपि पतिहि बोलावा।
कहा चलैं कर करहु बनावा।।
अब विलंबु केहि कारन कीजे।
तुरत कपिन कहुं आयसु दीजे।।

अब राम लंका जाकर सीताजी को वापस लाने की चिंता करने लगे। उन्होंने सुग्रीव को बुलाया और आज्ञा दी कि अब लंका चलने की तैयारी की जाय। राम की आज्ञा पाते ही सुग्रीव ने वानर-सेना को लंका पर चढ़ाई के लिए तैयार हो जाने का आदेश दिया।

सुग्रीव की आज्ञा पाते ही समस्त वानर लंका की ओर चलने को तैयार होने लगे। सुग्रीव के सेनापतियों ने अपनी-अपनी सेनाओं की संभाल करनी प्रारंभ कर दी।

प्रभु-पद-पंकज नावहिं सीसा।
गर्जहिं भालु महाबल कीसा।।
देखी राम सकल कपि सैना।
चितइ कृपा करि राजिव नैना।।

बलवान वानर और भालू श्रीराम के चरणों में मस्तक झुकाकर गर्जना करने लगे। उनमें बड़ा उत्साह पैदा हो रहा था। रामचंद्रजी ने अपने नेत्रों से उस विशाल वानर-सेना का अच्छी तरह से अवलोकन किया।

रामचंद्रजी को हनुमान, सुग्रीव, अंगद तथा अन्य शूरवीरों पर पूरा विश्वास हो गया कि वे लंका को विजय कर लेंगे। अकेले हनुमान के लंका को जला डालने से ही राम यह समझ गये कि उनकी सेना का बल अपार है, इसी तरह से सुग्रीव और उनके अन्य साथी यह समझ रहे थे कि उनपर जब राम की कृपा है तो वे निश्चय ही इस कार्य में सफल होंगे।

राम कृपा-बल पाइ कपिन्दा।
भये पच्छजुत मनहुं गिरिन्दा ॥

राम की कृपा का बल पाकर वानर भी साहसवान बन गये, मानो पहाड़ों को ही पंख लग गये हों। वे हर्ष से उछलने-कूदने लगे। रामचंद्रजी ने इस प्रकार बड़े अच्छे मुहूर्त में लंका जीतने के लिए प्रस्थान किया।

□ हमारा

रामायण-संबंधी साहित्य

दशरथ-नंदन श्रीराम
रामायण-कालीन संस्कृति
रामायण-कालीन समाज
रामायण के पात्र भाग १, २
रामकीर्ति
बाल राम-कथा
राम-जन्म
राम-वन-गमन
लंका-विजय
सीता-हरण

जबतक हमारी भारत भूमि में गंगा और कावेरी प्रवहमान हैं तब [illegible] सीता-राम की कथा भी आबाल, स्त्री-पुरुष सबमें प्रचलित [illegible], माता की तरह हमारी जनता की रक्षा करती रहेगी।

—च० राजगोपालाचार्य